यह रामचरितमानस माधुरी नामक पुस्तक विविध विरदावली विराजमान मानोन्नत श्रीमन्महाराजाधिराज श्री १०८ भगवतीप्रसादसिंह साहेब बहादुर के. सी. आई. ई. एफ. ए. यू. बलरामपुर तुलसीपुराद्यधीश्वर के करकमल में सादर समर्पित है ॥

ब्रजमोहन लाल बी. ए.,

आनरेबल महाराजा बहादुर सर भगवतीप्रसाद सिंह, के-सी-आई-ई.
बलरामपुर (अवध)

सूची

पृष्ठ

श्रीसीताराम

(श्री भक्तमाल तिलककार)

" वैष्णवरत्न " श्रीसीताराम शरण भगवान प्रसादजी रूपकला

१९७४ (अयोध्या) 1917

भूमिका

दो० वन्दौं पवन कुमार, खल बन पावक ज्ञान घन।
जासु हृदय आगार, बसहिं राम शर चाप धरि ॥

तत्त्वाचार्य्यवर्य्य कविशार्दूल श्री १०८ गोस्वामी तुलसीदास जी रचित (श्रीरामचरितमानस) रामायण की महिमा वर्णन करना द्वादश कलायुत प्रचण्ड मार्तण्ड को टिमिटिमाता हुआ दीपक देखलाना है। यह अद्वितीय तथा अलौकिक ग्रन्थ जैसा हिन्दी साहित्य सर्वोपरि भूषण है उसी प्रकार शाश्वत सनातन धर्म काभी इस कुसमय में एकमात्र आधार और स्तम्भ है। इसमें एक से अद्भुत रत्न के समान अनेकानेक विषय सन्निवेशित हैं। जिस प्रकार इसमें साहित्यविषयक रचना-प्रणाली, छन्द, अलंकार और भाषाप्रौढ़ता दर्शित हैं, उसी प्रकार अखिल वेद वेदान्त पुराण इतिहासादिकों का सारभूत इस अलौकिक ग्रंथ में कूट २ कर भरा हुआ है यदि मर्मज्ञ सज्जन-वृन्द इसमें इन विषयों को पृथक् लिखना चाहें तो अनेक स्वतन्त्र ग्रंथ निर्माण होसक्के हैं जो अत्यन्त उपयोगी होने के अतिरिक्त अनेकों सद् सिद्धान्तों के परम प्रमाणिक और आदरणीय आदर्श होंगे विशेषकर हिन्दी साहित्य दार्शनिक विषय और सामान्यनीति, राजनीति, समाजनीति, धार्मिक सिद्धान्त, कर्म-योग, ज्ञानयोग, भक्तियोग, इत्यादि विषयों पर अनुपम ग्रन्थ निर्मित हो सक्के हैं। इन सब विषयों पर सहसा हाथ न डाल कर मानस के विविध आशय और उपयोगी विषयों को संग्रह कर सात अध्यायों में निम्नानुसार प्रगट किया:—

प्रथम अध्याय

श्रीनाममहात्म और स्तुतियां।

जितने स्तोत्र श्री रामचरितमानस में हैं वे प्रायः सब इस खण्ड में संग्रहीत हैं जिनकी महिमा अकथनीय है।

श्री गोस्वामी जी द्वारा निर्मित ये स्तोत्र अमित फलदायक हैं।

द्वितीय अध्याय

श्रीमुखवचन।

इस खण्ड में परमात्मा श्री रामचन्द्र जी के मुखारविन्द से विकासित वचन संग्रहीत है, जो वेद का सारतत्त्व, अनेकानेक विषयों पर भगवान ने समय २ पर कथन किया है। इन श्रीमुख वचनों की महिमा कहना कठिन ही नहीं वरन् असम्भव है इन आदर्श वचनों के अनुसार जो आचरण करेंगे वे परम सुख और शान्ति को निस्सन्देह लाभ करेंगे।

तृतीय अध्याय

सामान्य नीति और धर्म।

रामचरितमानस में अनेकानेक नीति पूरित वचन भरे पड़े हैं। उन में से कुछ पदों को अलग कर प्रकाशित किया है कि सज्जनों को हस्तामलक की नाईं प्रस्तुत रहैं जिनके अवलम्बन से अपने जीवन को सुखपूर्वक व्यतीत करैं।

चतुर्थ अध्याय

सकलकामनासिद्धार्थे।

इस अध्याय में श्री रामायण जी के नवाह पाठ करने की रीति तथा मनोवाञ्छित फल प्राप्त करनार्थ अत्यन्त उपयोगी संग्रह।

पंचम अध्याय

श्री लाल लाड़िले लखन और श्री अंगद जी का सम्वाद।

षष्ठम अध्याय

इस में स्त्रियों के हित की बातें हैं।

सप्तम अध्याय

श्री रामचन्द्र जी के निर्गुण और सगुण
स्वरूप का कथन।

आशा है कि सर्व सज्जन गण इसको सप्रेम अवलोकन कर अपने मनोवाञ्छित फलों को प्राप्त करेंगे और यदि कहीं भूल चूक दृष्टिगोचर हो तो अपराध क्षमा करेंगे क्योंकि

दो० जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकार॥

याते मुझे पूर्ण विश्वास है कि सज्जन सुजान वृन्द जहाँ कहीं ग्रन्थ में त्रुटि देखें तो इस दीन को सूचित करैं जासे कि पुनरावृत्ति में दूषण न रहै।

मैं उन सज्जन व्यक्तियों को जिन्होंने अनेक प्रकार से सहायता प्रदान की है विशेष कर मुंशी बद्रीप्रसाद अग्रवाल असिस्टेन्ट मास्टर (लायल कलीजियट स्कूल बलरामपूर) व बाबू महेशप्रसाद बी० ए० बलरामपुर निवासी (जेनरल सुप्रिन्टेन्डेन्ट कलक्टरी बाराबंकी) व बाबू इन्द्रदेवनारायण साहेब (मयंक टीकाकार) व बाबू गनेशप्रसाद बी० ए० यल २ बी० व पंडित कन्हैयालाल साहेब मिश्र बी० ए० (प्रायवेट सेक्रेटरी राज बलरामपूर) को सहर्ष धन्यवाद देता हूँ जिन्हों ने इस मानस रामचरित्र के संग्रह सम्पादन में सहायता प्रदान की तथा बाबू

दंडक वन प्रभु कीन्ह सुहावन । जन मन अमित नाम किय पावन ॥
निशिचर निकर दले रघुनंदन । नाम सकल कलिकलुष निकंदन ॥

दो० शबरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्ह रघुनाथ ।
नाम उधारे अमितखल, बेद बिदित गुण गाथ ॥

राम सुकण्ठ बिभीषन दोऊ । राखे शरन जान सब कोऊ ॥
नाम अनेक ग़रीब निवाजे । लोक बेद बर बिरद बिराजे ॥
राम भालु कपि कटक बटोरा । सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा ॥
नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं । करहु बिचार सुजन मनमाहीं ॥
राम सकुल रन रावन मारा । सीयसहित निजपुर पगु धारा ॥
राजा राम अवध रजधानी । गावत गुन सुर मुनि बर बानी ॥
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती । बिन श्रम प्रवल मोह दल जीती ॥
फिरत सनेह मगन सुख अपने । नाम प्रताप सोच नहिं सपने ॥

दो० ब्रह्म रामते नाम बड़, बरदायक बरदानि ।
रामचरित शतकोटिमहँ, लिय महेशजियजानि ॥

नाम प्रताप शम्भु अविनासी । साज अमंगल मंगलरासी ॥
शुक सनकादि सिद्ध मुनि योगी । नाम प्रसाद ब्रह्मसुखभोगी ॥
नारद जानेउ नाम प्रतापू । जगप्रियहरिहर हरिप्रियआपू ॥
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू । भगतशिरोमणि भे प्रहलादू ॥
ध्रुव सगलानि जपेउ हरिनामू । पायउ अचल अनूपम ठामू ॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू । अपने बस करि राखे रामू ॥
अपत अजामिल गज गनिकाऊ । भये मुकुत हरि नाम प्रभाऊ ॥
कहउँ कहाँ लागि नाम बड़ाई । राम न सकहिं नाम गुन गाई ॥

व्रजमोहनलाल बी. ए.,
संग्रहकर्ता

श्रीरामनाममाहात्म्य और स्तुतियां ॥

प्रथम अध्याय ॥

बन्दौं राम नाम रघुबर को । हेतु कृशानु भानु हिमकर को ॥
बिधि हरि हर मय बेद प्राण सो । अगुण अनूपम गुणनिधान सो ॥
महा मंत्र जो जपत महेशू । काशी मुक्ति हेतु उपदेशू ॥
महिमा जासु जान गनराऊ । प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ ॥
जानि आदि कवि नाम प्रतापू । भयउ शुद्ध करि उलटा जापू ॥
सहस नाम सम सुनि शिवबानी । जपि जेई शिव संग भवानी ॥
हर्षे हेतु हेरि हर हीको । किय भूषण तिय भूषण तीको ॥
नाम प्रभाव जान शिव नीको । कालकूट फल दीन्ह अमीको ॥

दो० बर्षाऋतु रघुपति भगति, तुलसी शालि सुदास ।
राम नाम बर बर्ण युग, श्रावण भादौं मास ॥

आखर मधुर मनोहर दोऊ। बरन बिलोचन जन जिय जोऊ॥
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक निबाहू॥
कहत सुनत सुमिरत सुठि नीके। राम लषन सम प्रिय तुलसीके॥
बरनत बरन प्रीत बिलगाती। ब्रह्मजीव सम सहज सँघाती॥
नर नारायन सरिस सुभ्राता। जग पालक बिशेषि जन त्राता॥
भगति सुतिय कल करन बिभूषण। जगहित हेतु बिमलबिधुपूषण॥
स्वाद तोष सम सुगति सुधाके। कमठ शेष सम धर बसुधाके॥
जन मन मंजु कंज मधुकर से। जीह यसोमति हरि हलधर से॥

दो० एक छत्र यक मुकुट मनि, सब बरननि पर जोउ।
तुलसी रघुबर नाम के, बरन बिराजत दोउ॥

समुझत सरस नाम अरु नामी। प्रीति परस्पर प्रभु अनुगामी॥
नाम रूप द्वौ ईश उपाधी। अकथअनादि सुसासुझिसाधी॥
को बड़ छोट कहत अपराधू। सुनि गुनभेद समुझिहैं साधू॥
देखिय रूप नाम आधीना। रूप ज्ञान नहिं नाम विहीना॥
रूप बिशेष नाम बिनु जाने। करतलगत न परहि पहिचाने॥
सुमिरिय नाम रूप बिनु देखे। आवत हृदय सनेह बिशेखे॥
नाम रूप गति अकथ कहानी। समुझतसुखद न जातबखानी॥
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी॥

दो० राम नाम मनि दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरौ, जो चाहसि उजियार॥

नाम जीह जपि जागहिं योगी। बिरति बिरंचि प्रपंच बियोगी॥
ब्रह्मसुखहिं अनुभवहिं अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा॥
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीह जपि जानहिं तेऊ॥

साधक नाम जपहिं लवलाये। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाये ॥
जपहिं नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी ॥
रामभगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा ॥
चहुँ चतुरन कहँ नाम अधारा। ज्ञानी प्रभुहिं बिशेष पियारा ॥
चहुँ युग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ। कलि विशेष नहिं आन उपाऊ ॥

दो० सकल कामनाहीन जे, राम भगति रस लीन।
नाम सुप्रेमपियूष हृद, तिनहुँ किये मन मीन ॥

अगुन सगुन दोउ ब्रह्म स्वरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥
मोरे मत वड़ नाम दुहूते। कियजेहियुगनिजबसनिजबूते ॥
प्रौढ़ सुजन जन जानहिं जनकी। कहहुँ प्रतीतिप्रीति रुचि मनकी ॥
एक दारुगत देखिय एकू। पावक युग सम ब्रह्म बिवेकू ॥
उभय अगम युग सुगम नामते। कहहुँ नाम बड़ ब्रह्म रामते ॥
व्यापक एक ब्रह्म अबिनाशी। सत चेतन घन आनँद राशी ॥
अस प्रभु हृदय अछत अविकारी। सकल जीव जग दीन दुखारी ॥
नाम निरूपन नाम यतनते। सोउ प्रगटत जिमि मोलरतनते ॥

दो० निर्गुन ते इहि भांति बड़, नाम प्रभाव अपार।
कहउँ नाम बड़ रामते, निज बिचार अनुसार ॥

राम भगत हित नर तनु धारी। सहि संकट किय साधु सुखारी ॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा। भगत होहिं मुद मंगल बासा ॥
राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खलकुमति सुधारी ॥
ऋषि हित राम सुकेतसुताकी। सहित सेन सुत कीन्ह बिबाकी ॥
सहित दोष दुख दास दुरासा। दलै नाम जिमि रवि निसि नासा ॥
भंज्यो राम आप भवचापू। भव भय भंजन नाम प्रतापू ॥

दंडक बन प्रभु कीन्ह सुहावन । जन मन अमित नाम किय पावन॥
निशिचर निकर दले रघुनंदन । नाम सकल कलिकलुष निकंदन॥

दो० शबरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्ह रघुनाथ ।
नाम उधारे अमित खल, बेद बिदित गुण गाथ ॥

राम सुकण्ठ विभीषन दोऊ । राखे शरन जान सब कोऊ ॥
नाम अनेक गरीब निवाजे । लोक बेद बर बिरद बिराजे ॥
राम भालु कपि कटक बटोरा । सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा ॥
नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं । करहु बिचार सुजन मनमाहीं ॥
राम सकुल रन रावन मारा । सीयसहित निजपुर पगु धारा ॥
राजा राम अवध रजधानी । गावत गुन सुर मुनि बर बानी ॥
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती । बिन श्रम प्रबल मोह दल जीती॥
फिरत सनेह मगन सुख अपने । नाम प्रताप सोच नहिं सपने ॥

दो० ब्रह्म रामते नाम बड़, बरदायक बरदानि ।
रामचरित शतकोटिमहँ, लिय महेश जिय जानि ॥

नाम प्रताप शम्भु अबिनासी । साज अमंगल मंगलरासी ॥
शुक सनकादि सिद्ध मुनि योगी । नाम प्रसाद ब्रह्मसुखभोगी ॥
नारद जानेउ नाम प्रतापू । जगप्रियहरिहर हरिप्रियआपू ॥
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू । भगतशिरोमणि भे प्रहलादू ॥
ध्रुव सगलानि जपेउ हरिनामू । पायउ अचल अनूपम ठामू ॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू । अपने बस करि राखे रामू ॥
अपत अजामिल गज गनिकाऊ । भये मुकुत हरि नाम प्रभाऊ ॥
कहउँ कहाँ लगि नाम बड़ाई । राम न सकहिं नाम गुन गाई ॥

दो० राम नाम को कल्पतरु, कलि कल्यान निवास।
जो सुमिरत भव भाँगते, तुलसी तुलसीदास ॥

चहुँयुग तीन काल तिहुँ लोका। भये नाम जपि जीव बिशोका॥
वेद पुराण सन्त मत येहू। सकल सुकृत फल राम सनेहू॥
ध्यान प्रथम युग मखविधि दूजे। द्वापर परितोषत प्रभु पूजे॥
कलि केवल मल मूल मलीना। पाप पयोनिधि जन मन मीना॥
नाम कामतरु काल कराला। सुमिरतसुखद सुलभ सबकाला॥
रामनाम कलि अभिमतदाता। हित परलोक लोक पितुमाता॥
नहिं कलि करम न भगति बिवेकू। राम नाम अवलम्बन एकू॥
कालनेमि कलि कपटनिधानू। राम सुमति समरथ हनुमानू॥

दो० राम नाम नरकेशरी, कनककशिपु कलिकाल।
जापक जन प्रहलाद जिमि, पालहिं दलि सुरसाल॥

भाव कुभाव अनख आलसहू। नाम जपत मंगल दिशि दसहू॥
सुमिरि सो राम नाम गुन गाथा। करौं नाइ रघुनाथहिं माथा॥
मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपा अघाती॥
राम सुस्वामि कुसेवक मोसे। निजदिसि देखि दयानिधि पोसे॥
लोकहुँ बेद सुसाहेब रीती। बिनय सुनत पहिचानत प्रीती॥
गनी ग़रीब ग्राम नर नागर। पण्डित मूढ़ मलीन उजागर॥
सुकबिकुकबि निजमति अनुसारी। नृपहि सराहत सब नर नारी॥
साधु सुजान सुशील नृपाला। ईश अंश भव परम कृपाला॥
सुनि सनमानहिं सबन सुबानी। भनितभगतिनतिगतिपहिचानी॥
यह प्राकृत महिपाल स्वभाऊ। जानि शिरोमणि कोशलराऊ॥
रीझत राम सनेह निसोते। को जग मन्द मलिनमति मोते॥

छन्द १

भय प्रगट कृपाला दीनदयाला कौशल्या मतकारी,
हर्षित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप निहारी।
लोचन अभिरामा तनु घन श्यामा निज आयुध भुजचारी,
भूषण बनमाला नयन बिशाला शोभा सिन्धु खरारी॥
कह दुहुँ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि विधि करौं अनन्त,
माया गुण ज्ञानातीत अमाना बेद पुराण भनन्त।
करुना सुखसागर सब गुनआगर जेहि गावहिं श्रुति सन्त,
सो मम हित लागी जन अनुरागी प्रगट भये श्रीकन्त॥
ब्रह्मांडनिकाया निर्मितमाया रोम रोम प्रति बेद कहै,
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै।
उपजा जब ज्ञाना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै,
कहि कथा सुनाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै॥
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा,
कीजै शिशुलीला अति प्रियशीला यह सुख परम अनूपा।
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा,
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥

छन्द २

परसत पदपावन शोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही,
देखत रघुनायक जन सुखदायक सन्मुख होइ कर जोरि रही।
अतिप्रेम अधीरा पुलकशरीरा मुख नहिं आवै बचन कही,
अतिशय बड़भागी चरनन्हि लागी युगल नयन जलधार बही॥
धीरज मन कीन्हा प्रभुकहँ चीन्हा रघुपति कृपा भगति पाई,
अति निर्मल बानी अस्तुति ठानी ज्ञानगम्य जय रघुराई।

मैं नारि अपावन प्रभु जगपावन रावनरिपु जन सुखदाई,
राजीव विलोचन भव भय मोचन पाहि पाहि शरनहिं आई ॥
मुनि शाप जो दीन्हा अतिभल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना,
देखेउँ भरि लोचन हरि भवमोचन यहै लाभ शंकर जाना ।
विनती प्रभु मोरी मैं मति भोरी नाथ न बर माँगों आना,
पदपद्म परागा रस अनुरागा मम मनमधुप करै पाना ॥
जेहि पद सुरसरिता परम पुनीता प्रगट भई शिव शीस धरी,
सोई पदपंकज जेहिं पूजत अज मम शिर धरेउ कृपालु हरी ।
यहि भाँति सिधारी गौतमनारी बार बार हरि चरण परी,
जो अति मनभावा सो बर पावा गइ पतिलोक अनंद भरी ॥

छन्द ३ चौपाई

जय रघुबंश बनज बनभानू । गहन दनुज कुलदहन कृशानू ॥
जय सुर बिप्र धेनु हितकारी । जय मदमोह कोह भ्रमहारी ॥
बिनय शील करुना गुनसागर । जयतिबचन रचना अतिआगर॥
सेवक सुखद सुलभ सब अंगा । जय शरीर छबि कोटि अनंगा ॥
करौं कहा मुख एक प्रशंसा । जय महेश मन मानस हंसा ॥
अनुचित बहुत कहेउँ अज्ञाता । छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता ॥
कहि जय जय जय रघुकुलकेतू । भृगुपति गये बनहिं तपहेतू ॥

छन्द ४ चौपाई

श्याम ताम रस दाम शरीरं । जटा मुकुट परिधन मुनिचीरं ॥
पानि चाप शर कटि तूनीरं । नौमि निरंतर श्री रघुबीरं ॥
मोह बिपिन घन दहन कृशानुं । संत सरोरुह कानन भानुं ॥
निशिचर करि बरूथ मृगराजं । त्रातु सदा नो भवखगबाजं ॥
अरुण नयन राजीव सुबेशं । सीता नयन चकोर निशेशं ॥

हर हृदि मानसबाल मरालं । नौमि राम उर बाहु बिशालं ॥
संशय सर्प ग्रसन उरगादं । शमन सुकर्क सतर्क बिषादं ॥
भव भंजन रंजन सुरयूथं । त्रातु सदा नो कृपावरूथं ॥
निर्गुन सगुन बिषम सम रूपं । ज्ञान गिरा गोतीत मनूपं ॥
अमल माखिल मनवद्य मपारं । नौमि राम भंजन महि भारं ॥
भक्त कल्प पादप आरामं । तर्जन क्रोध लोभ मदकामं ॥
अति नागर भवसागर सेतुं । त्रातु सदा दिनकरकुल केतुं ॥
अतुलित भुज प्रताप बलधामं । कलिमल बिपुल बिभंजननामं ॥
धर्म बर्म नर्मद गुनग्रामं । संतत शंतनोतु मम रामं ॥
जदपि बिरजब्यापक अबिनाशी । सबके हृदय निरंतर बाशी ॥
तदपि अनुजसिय सहितखरारी । बसहु मनसि मम काननचारी ॥
जे जानहिं ते जानहु स्वामी । सगुन अगुन उर अन्तरजामी ॥
जो कोशलपति राजिवनयना । करो सो राम हृदय मम अयना ॥

छन्द ५

जय राम रूप अनूप निर्गुण सगुन गुन प्रेरक सही ।
दशशीस बाहु प्रचण्ड खण्डन चंड शर मण्डन मही ॥
पाथोद गात सरोज मुख राजीव आयत लोचनं ।
नित नौमि राम कृपालु बाहु बिशाल भव भय मोचनं ॥
बल मप्रमेय मनादि मज मव्यक्त मेक मगोचरं ।
गोबिंद गोपर द्वंद्व हर बिज्ञान घन धरनीधरं ॥
जो राम मंत्र जपंत संत अनंत जन मन रंजनं ।
नित नौमि राम अकाम प्रिय कामादि खल दल गंजनं ॥
जेहि श्रुति निरंतर ब्रह्म ब्यापक बिरज अज कहि गावहीं ।
करि ध्यान ज्ञान बिराग योग अनेक मुनि कहिं पावहीं ॥

सो प्रगट करुनाकंद शोभा वृन्द अग जग मोहई।
मम हृदय पंकज भृंग अंग अनंग बहु छवि सोहई॥
जो अगम सुगम स्वभाव निर्मल असम सम शीतल सदा।
पश्यन्ति यं योगी यतन करि कर्म मन गोवश यदा॥
सो राम रमानिवास संतत दास वश त्रिभुवन धनी।
मम उर वसहु सो शमन संसृति जासु कीरति पावनी॥
जय राम सदा सुख धाम हरे, रघुनायक शायक चाप धरे।
भव वारण दारणसिंह प्रभो, गुणसागर नागर नाथ बिभो॥
तनु काम अनेक अनूप छवी, गुण गावत सिद्ध मुनींद्र कबी।
जशु पावन रावण नाग महा, खगनाथ यथा करि कोप गहा॥
जन रंजन भंजन शोक भयं, गत क्रोध सदा प्रभु बोधमयं।
अवतार अपार उदार गुनं, महिभार विभंजन ज्ञान घनं॥
अज व्यापकमेक अनादि सदा, करुणाकर राम नमामि मुदा।
रघुवंश विभूषण दूषणहा, कृतभूप विभीषण दीन रहा॥
गुण ज्ञाननिधान असान अजं, नित राम नमामि बिभुं बिरजं।
भुज दंड प्रचंड प्रताप बलं, खल वृंद निकंद महाकुशलं॥
बिनु कारन दीन दयालु हितं, छबिधाम नमामि रमासहितं।
भवतारन कारनं काज परं, मन संभव दारुण दोष हरं॥
शर चाप मनोहर त्रोन धरं, जलजारुन लोचन भूप वरं।
सुख मंदिर सुंदर श्रीरमनं, मद मार महा ममता शमनं॥
अनवद्य अखंड न गोचर सो, सब रूप सदा सब होय न सो।
इति वेद वदंति न दंति कथा, रवि आतप भिन्न न भिन्नयथा॥
कृतकृत्य बिभो सब बानर ए, निरखंति तवानन सादर ए।
धिक् जीवन देव शरीर हरे, तव भक्ति बिना भव भूलि परे॥

अब दीन दयालु दया करिए, मति मोरि विभेदकरी हरिए।
जेहितें बिपरीत कृपा करिए, दुखसो सुख मानि सुखी चरिए॥
खल खण्डन मण्डल रम्य क्षमा, पद पंकज सेवित शंभु उमा।
नृप नायक दे बरदानमिदं, चरणाम्बुज प्रेम सदा शुभदं॥

छन्द॥

जय राम शोभा धाम, दायक प्रणत विश्राम।
धृत त्रोन वर शर चाप, भुजदंड प्रवल प्रताप॥
जय दूषणारि खरारि, मर्दन निशाचर धारि।
इह दुष्ट मारेहु नाथ, भए देव सकल सनाथ॥

छन्द॥

जय हरण धरणी भार, महिमा अपार उदार।
जय रावणारि कृपाल, किये जातुधान विहाल॥
लंकेश अतिबल गर्ब, किये बस्य सुर गंधर्ब।
मुनि सिद्ध नर खग नाग, हठि पंथ सब के लाग॥
पर द्रोह रति अति दुष्ट, पायो सो फल पापिष्ट।
अब सुनहु दीन दयालु, राजीव नयन बिशालु॥
मोहि रहा अति अभिमान, नहिं कोऊ मोहि समान।
अब देखि प्रभुपद कंज, गत मानप्रद दुख पुंज॥
कोउ ब्रह्म निर्गुण ध्याव, अव्यक्त जेहि श्रुति गाव।
मोहि भाव कोशलभूप, श्रीराम सगुण स्वरूप॥
वैदेहि अनुज समेत, मम हृदय करहु निकेत।
मोहि जानिये निज दास, दे भगति रमा निवास॥

छन्द॥

दे भगति रमानिवास त्रास हरन शरन सुख दायकं।

सुखधाम राम नमामि काम अनेक छवि रघुनायकं ॥
सुर वृंद रंजन द्वंद्व भंजन मनुज तनु अतुलित वलं ।
ब्रह्मादि शंकर सेव्य राम नमामि करुना कोमलं ॥
मामभिरक्षय रघुकुल नायक । धृतु वर चाप रुचिर करसायक ॥
मोह महाघन पटल प्रभंजन । संशयविपिन अनल सुररंजन ॥
अगुण सगुण गुणमंदिर सुंदर । भ्रमतम प्रवल प्रतापदिवाकर ॥
काम क्रोध मद गज पंचानन । वसहु निरंतर जन मन कानन ॥
विषय मनोरथ पुंज कंज वन । प्रवल तुषार उदार पार मन ॥
भव वारिधि मंदर पर मंदर । वारय तारय संसृति दुस्तर ॥
श्याम गात्र राजीव विलोचन । दीनवंधु प्रणतारत मोचन ॥
अनुज जानकी सहित निरंतर । वसहु रामनृप मम उर अंतर ॥
मुनि रंजन महिमंडल मंडन । तुलसिदासप्रभु त्रासनिखंडन ॥

वेदस्तुति प्रारम्भः ॥

छन्द ॥

जय सगुन निर्गुनरूप राम अनूप भूप शिरोमने ।
दशकंधरादि प्रचंड निशचर प्रवल खल भुज वल हने ॥
अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुख दहे ।
जय प्रनतपाल दयालु प्रभु संयुक्त शक्ति नमामहे ॥
तव विषम मायावश सुरासुर नाग नर अग जग हरे ।
भवपंथ भ्रमित अमित दिवस निशि कालकर्म गुननिभरे ॥
जे नाथ करि करुना विलोके त्रिविध दुखते निर्बहे ।
भव खेद छेदन दक्ष हम कहुँ रक्ष राम नमामहे ॥
जे ज्ञान मान विमत्त तव भवहरनि भक्ति न आदरी ।

ते पाइ सुरदुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ॥
बिश्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे ।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहि भव नाथ सो स्मरामहे ॥
जे चरण शिव अज पूज्यरज शुभ परसि मुनिपतनी तरी ।
नख निर्गता सुरवंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी ॥
ध्वज कुलिश अंकुश कंजयुत बन फिरत कंटक किन्ह लहे ।
पद कंज द्वंद्व मुकुंद राम रमेश नित्य भजामिहे ॥
अव्यक्त मूल मनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने ।
षट कंध शाखा पंचवीस अनेक परन सुमन घने ॥
फल युगल विधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे ।
पल्लवत फूलत नवल नित संसारविटप नमामहे ॥
ते ब्रह्म अज मद्वैत अनुभव गम्य मन पर ध्यावहीं ।
ते कहहिं जानहिं नाथ हम तव सगुनयश नित गावहीं ॥
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर मांगहीं ।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं ॥

छन्द ॥

जय राम रमा रमनं समनं, भवताप भयाकुल पाहि जनं ।
अवधेश सुरेश रमेश बिभो, शरनागत मांगत पाहि प्रभो ॥
दशशीस बिनाशन बीस भुजा, कृतदूरि महा महि भूरि रुजा ।
रजनीचर बृंद पतंग रहे, शरपावक तेज प्रचंड दहे ॥
महि मंडल मंडन चारु तरं, धृत शायक चाप निषंग वरं ।
मद मोह महा ममता रजनी, तम पुंज दिवाकर तेज अनी ॥
मनुजात किरात निपात किये, मृग लोक कुभोग सरे न हिये ।
हति नाथ अनाथनि पाहि हरे, बिषयाबन पांवर भूलि परे ॥

वहु रोग वियोगन्ह लोग हये, भवदंघ्रि निरादर के फल ये।
भव सिंधु अगाध परे नर ते, पद पंकज प्रेम न जे करते॥
अति दीन मलीन दुखी नितहीं, जिनके पद पंकज प्रीत नहीं।
अवलंब भवंत कथा जिन्ह के, प्रियसंत अनंत सदा तिन्ह के॥
नहिं राग न लोभ न मान मदा, तिन्ह के सम वैभव वा विपदा।
यहि तें तव सेवक होत मुदा, मुनित्यागत जोग भरोस सदा॥
करि प्रेम निरंतर नेम लिये, पद पंकज सेवत शुद्ध हिये।
सनमान निरादर आदरही, सब संत सुखी विचरंति मही॥
मुनि मानस पंकज भृंग भजे, रघुवीर महा रनधीर अजे।
तव नाम जपामि नमामि हरी, भवरोग महामद मान अरी॥
गुन शील कृपा परमायतनं, प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं।
रघुनंद निकंदन द्वंद्वघनं, महिपाल विलोकिय दीनजनं॥

दो० बार बार बर मांगिहौं, हर्षि देहु श्रीरंग।
पद सरोज अनपावनी, भक्ति सदा सत संग॥

सुनि प्रभु वचन हर्षि मुनिचारी। पुलकगात अस्तुति अनुसारी॥
जय भगवंत अनंत अनामय। अनघ अनेक एक करुनामय॥
जय निर्गुन जय जय गुनसागर। सुख मंदिर सुंदर अतिनागर॥
जय इंदिरा रमन जय भूधर। अनुपम अज अनादि शोभाकर॥
ज्ञान निधान अमान मानप्रद। पावन सुयश पुरान वेद वद॥
तज्ज्ञ कृतज्ञ अज्ञता भंजन। नाम अनेक अनाम निरंजन॥
सर्व सर्वगत सर्व उरालय। बससि सदा हम कहँ परिपालय॥
द्वंद्व विपति भवफंद विभंजय। हृदि बसु राम काममद गंजय॥

दो० परमानंद कृपायतन, मन परिपूरन काम।
प्रेम भक्ति अनपायिनी, देहु हमहिं श्रीराम॥

देहु भगति रघुपति अतिपावनि । त्रिबिधताप भव ताप नसावनि ॥
प्रनतकाम सुरधेनु कल्पतरु । होइ प्रसन्न दीजै प्रभु यह बरु ॥
भव बारिधि कुंभज रघुनायक । सेवक सुलभ सकल सुखदायक ॥
मनसंभव दारुन दुख दारय । दीनबंधु समता बिस्तारय ॥
आस त्रास इरिषादि निवारक । विनय विवेक विरति विस्तारक ॥
भूप मौलिमनि मंडन धरनी । देहु भक्ति संसृतिसरितरनी ॥
मुनि मन मानसहंस निरंतर । चरण कमल वंदित अज शंकर ॥
रघुकुलकेतु सेतु श्रुतिरक्षक । काल कर्म स्वभावगुन भक्षक ॥
तारन तरन हरन सब दूषन । तुलसिदासप्रभु त्रिभुवनभूषन ॥

दो० बार बार अस्तुति करि, प्रेम सहित शिरनाइ ।
ब्रह्मभवन सनकादि गे, अति अभीष्ट वर पाइ ॥

भुजंगप्रयात-रुद्राष्टक ॥

नमामीश मीशान निर्वाण रूपम् ।
विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपम् ॥
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं ।
चिदाकाश माकाशवासं भजेहं ॥
निराकार मोंकारमूलं तुरीयं ।
गिराज्ञान गोतीतमीशं गिरीशं ॥
करालं महाकाल कालं कृपालं ।
गुणागार संसारपारं नतोहं ॥
तुषाराद्रि शंकास गौरं गभीरं ।
मनोभूत कोटिप्रभा श्रीशरीरं ॥

स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा।
लसद्भालबालेंदु कंठे भुजंगा॥
चलत्कुंडलं शुभ्र नेत्रं विशालं।
प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं॥
मृगाधीश चर्माम्बरं मुंडमालं।
प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि॥
प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं।
अखंडं अजं भानुकोटि प्रकाशं॥
त्रयःशूल निर्मूलनं शूलपाणिं।
भजेहं भवानी पतिं भावगम्यं॥
कलातीत कल्याण कल्पांतकारी।
सदा सज्जनानंददाता पुरारी॥
चिदानंद संदोह मोहापहारी।
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी॥
न यावदुमानाथ पादारविंदं।
भजंतीह लोके परे वा नराणां॥
न तावत्सुखं शांति संताप नाशं।
प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजां।
नतोहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं॥
जरा जन्मदुःखौघतातप्यमानं।
प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो॥

श्लो० ॥ रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतुष्टये।
ये पठन्ति नरा भक्तास्तेषां शंभुः प्रसीदति॥

छन्द ॥

पाई न केहि गति पतितपावन राम भजु सुनु शठ मना ।
गणिका अजामिल व्याध गीध गजादि खल तारे घना ॥
आभीर यमन किरात खस श्वपचादि अति अघरूप जे ।
कहि नाम बारक तेपि पावन होहिं राम नमामि ते ॥
रघुबंश भूषण चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं ।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं ॥
शतपंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरे ।
दारुण अविद्या पंच जनित विकार श्री रघुपति हरे ॥
सुंदर सुजान कृपानिधान अनाथ पर कर प्रीत जो ।
सो एक राम अकामहित निर्वान प्रदसम आन को ॥
जाकी कृपा लवलेश तें मतिमंद तुलसीदासहूँ ।
पायो परम विश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूँ ॥

दो० मोसम दीन न दीनहित, तुम समान रघुबीर ।
अस बिचारि रघुवंशमनि, हरहु विषम भव पीर ॥
कामिहिंनारिपियारिजिमि, लोभिहिप्रियजिमिदाम ।
तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रियलागहुमोहिराम ॥

द्वितीय अध्याय ॥

श्रीमुख वचन ॥

श्रीरामचन्द्रजी श्रीजानकीजी को फुलवाड़ी में देखकर लक्ष्मणजी से कहते हैं।

रघुवंशिन्ह कर सहज सुभाऊ। मन कुपंथ पग धरहि न काऊ ॥
मोहि अतिशय प्रतीत मन केरी। जेहि सपनेहु परनारि न हेरी ॥
जिनके लहहिं न रिपुरण पीठी। नहि लावहि परतिय मन डीठी ॥
मंगल लहहि न जिनके नाहीं। ते नर वर थोरे जग माहीं ॥

भृगुपति के कोप को बढ़ते हुये देखकर श्रीरघुनाथजी जल सम वचन बोले।

जो लरिका कछु अचगरि करहीं। गुरु पित मातु मोद मन भरहीं ॥

जब परशुरामजी श्रीरामचन्द्र की ओर देखकर सक्रोध बोले तब श्रीरामजी ने कहा।

टेढ़ जानि शंका सब काहू। वक्र चन्द्रमहि ग्रसै न राहू ॥
क्षमहु चूक अनजानत केरी। चहिय विप्र उर कृपा घनेरी ॥
देव एक गुण धनुष हमारे। नव गुण परम पुनीत तुम्हारे ॥
क्षत्रिय तनु धरि समर सकाना। कुल कलंक तेहि पामर जाना ॥
विप्र वंश की अस प्रभुताई। अभय होय जो तुमहि डराई ॥

अयोध्याकाण्डम्।

गुरुजी के आगमन पर श्रीरामचन्द्रजी ने कहा है कि।

सेवक सदन स्वामि आगमनू। मंगल मूल अमंगल दमनू ॥
तदपि उचित जब बोलि सप्रीती। पठइय काज नाथ असि नीती ॥

राजा दसरथ के व्याकुल होजाने पर जब श्रीरामजी कैकेई

के भवन में आये तब अपनी माता कैकेई से कहा है कि ।

सुनु जननी सोइ सुत बड़ भागी । जो पितु मातु बचन अनुरागी ॥
तनय मातु पितु पोषण हारा । दुर्लभ जननी यहि संसारा ॥

अपने पिता श्रीदसरथजी को व्याकुल देखकर श्रीरामजी ने अपने श्रीमुखारविंद से कहा है कि ।

धन्य जनम जगतीतल तासू । पितहि प्रमोद चरित सुनि जासू॥
चारि पदारथ करतल ताके । प्रिय पितु मातु प्राण सम जाके॥

जिस समय रामचन्द्रजी कौसल्या माता से बिदा मांगी और यह समाचार सीताजी पर विदित हुवा तो अपनी माता के कहने पर श्रीरघुनाथजी नें जानकीजी से कहा है ।

आयसु मोर सास सेवकाई । सबविध भामिन भवन भलाई ॥
यहिते अधिक धरम नहिं दूजा । सादर सास ससुर पद पूजा ॥

दो० गुरु श्रुति संमत धरम फलु, पाइय बिनहिं कलेशु ।
हठ वश सब संकट सहे, गालव नहुष नरेशु ॥
सहज सुहृद गुरु स्वामि शिख, जो न करै शिर मानि ।
सो पछिताय अघाय उर, अवशि होय हित हानि ॥

जब लक्ष्मणजी ने सुना कि रामजी वन को जारहे हैं पास आ खड़े हुये उस समय लक्ष्मणजी को यह सिखावन श्रीरामजी ने दिया है ।

दो० मातुपितागुरुस्वामिसिख, शिरधरि करहिं सुभाय ।
लहेउलाभतिन्हजनमकर, नतरुजनमु जगजाय ॥

असजियजानि सुनहु शिख भाई । करहु मातु पितु पद सेवकाई ॥
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी । सोनृपअवशि नरकअधिकारी ॥

लक्ष्मण सीता समेत श्रीरामचन्द्रजी ने दसरथजी से बिदा होते समय कहा है कि।

तात किये प्रिय प्रेम प्रमादू। जसु जग जाय होय अपवादू॥

शृंगवेरपुरसें श्रीरामजीने अपने मंत्री सुमंत से कहा है कि।

धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुराण बखाना॥
संभावति कह अपजश लाहू। मरण कोटि सम दारुन दाहू॥

वालमीकजी से श्रीरामजी कहते हैं कि हे मुनिनायक ठाउँ बतादीजिये उस समय यह चौपाई कही है।

मंगल मूल विप्र परितोषू। दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू॥

चित्रकूट में जब भरथजी पुरवासियों सहित रामजी से भेंट करने को गये और गुरुजी ने श्रीरामजी से अयोध्या लौट आने को कहा उसके उत्तर में कहा है कि।

जे गुरुपद अंबुज अनुरागी। ते लोकहुँ वेदहुँ बड़भागी॥

भरथजी की बानी को सुनकर श्रीरघुनाथजी ने चित्रकूट में कहा है।

तात कुतरक करहु जनिजाये। वैर प्रेम नहिं दुरै दुराये॥
मुनिगन निकट विहंग मृग जाहीं। बाधक बधिक विलोकि पराहीं॥
हित अनहित पशु पंछिउ जाना। मानुष तनु गुण ज्ञान निधाना॥

भरथजी से बारबार अयोध्यापुरी लौट चलने की हठ को सुनकर श्रीसीतापति ने पुनि कहा कि।

पितु आयसु पालिय दुहुँ भाई। लोक वेद भल भूप भलाई॥
गुरु पितु मातु स्वामि सिख पाले। चलेहु कुमगु पगु परहि न खाले॥
राजधरम सरबस इतनोई। जिम मन माहं मनोरथ गोई॥

आरण्यकाण्डम्।

एक समय पंचवटी में जब सुखआसीन प्रभू गोदावरी के समीप बैठे थे तब लक्ष्मणजी को उपदेश किया है।

मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहि वस कीन्हे जीव निकाया॥
गो गोचर जहँ लगि मनुजाई। सो सब माया जानेहु भाई॥
तेहिकर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। विद्या अपर अविद्या दोऊ॥
एक दुष्ट अतिशय दुख रूपा। जा वश जीव परा भवकूपा॥
एक रचै जग गुन वश जाके। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताके॥
ज्ञानमान जहँ एको नाहीं। देखत ब्रह्म समान सब माहीं॥
कहिय तातसों परम विरागी। तृनसम सिद्धि तीनगुन त्यागी॥

दो० माया ईश न आपु कहँ, जानि कहिय सो जीव।
बंध मोक्ष प्रद सर्व पर, माया प्रेरक सीव॥

धर्म तें विरति योग तें ज्ञाना। ज्ञान मोक्ष प्रद वेद बखाना॥
जातें बेगि द्रवौं मैं भाई। सो मम भगति भगत सुखदाई॥
सो सुतंत्र अवलंब न आना। तेहि आधीन ज्ञान विज्ञाना॥
भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होहिं अनुकूला॥
भगति के साधन कहौं बखानी। सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी॥
प्रथमहि विप्र चरन अति प्रीती। निज निज धर्म निरत श्रुति रीती॥
यहिकर फल पुनि विषयविरागा। तब मम चरन उपज अनुरागा॥
श्रवनादिक नव भगति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मनमाहीं॥
संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम वचन भजन दृढ़नेमा॥
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोकहँ जाने दृढ़ सेवा॥
मम गुन गावत पुलकि शरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा॥

कामआदि मद दंभ न जाके। तात निरंतर वसु मैं ताके॥

गृधराज के वचन को सुनकर श्रीरामजी ने नयन में जल भर के कहा।

परहित वस जिन्ह के मनमाहीं। तिन्हकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥

मग में जाते हुये कबंध का निपात किया उसने अपनी सब कथा कही तब रामचन्द्रजी ने कहा है।

सुनु गंधर्व कहौं मैं तोंही। मोहि न सुहाइ ब्रह्मकुलद्रोही॥

दो० मनक्रम वचन कपट तजि, जो करि भूसुर सेव।
मोहि समेत विरंचि शिव, वश ताके सब देव॥

शापत ताडत परुष कहंता। विप्र पूज्य अस गावहिं संता॥
पूजिय विप्र शील गुन हीना। शूद्र न गुनगन ज्ञान प्रवीना॥

शबरी की अस्तुत को सुनकर उस से कहा है कि।

कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानौ एक भगति कर नाता॥
जाति पांति कुल धरम बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई॥
भगति हीन नर सोहै कैसे। बिनु ज़ल वारिद देखिय जैसे॥
नवधा भगति कहौं तोहि पाहीं। सावधान सुनु धरु मनमाहीं॥
प्रथम भगति संतन कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा॥

दो० गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान।
चौथिभगतिममगुनगन, करै कपट तजि गान॥

मंत्र जाप मम दृढ़ विश्वाशा। पंचम भजन सो वेद प्रकाशा॥
छठ दम शील विरति बहु कर्मा। निरत निरंतर सज्जन धर्मा॥
सातवँ सम मोहि मय जग देखा। मोहिते संत अधिक करि लेखा॥
आठवँ यथा लाभ संतोषा। सपनेहु नहिं देखै पर दोषा॥

नवम सरल सबसन छलहीना । मम भरोस हिय हर्ष न दीना ॥
नवमहँ एकौ जिन्ह के होई । नारि पुरुष सचराचर कोई ॥
सो अतिशयप्रिय भामिनि मोरे । सकल प्रकार भगति दृढ तोरे ॥

रास्ते में नारदजीने आकर के पूछा कि हे रघुनाथजी जब मैं विवाह करना चाहा था तो हे प्रभू केहि कारण करने नहीं दिया तब रामजी ने कहा ।

सुन मुनि तोहि कहौं सहरोशा । भजहिमोहितजिसकलभरोशा॥
करौं सदा तिन्हके रखवारी । जिमि बालकहिं राखु महतारी ॥
गहिशिशुबिच्छुअनलअहिधाई । तहँ राखौं जननी अरगाई ॥
प्रौढ़ भये तेहि सुत पर माता । प्रीति करे नहि पाछिल बाता ॥
मोरे प्रौढ़ तनय सम ज्ञानी । बालक सुत सम दास अमानी ॥
जिनहि मोरबल निजबल ताही । दुहु कहँ काम क्रोध रिपुआही ॥
यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं । पायहुँज्ञान भगति नहि तजहीं ॥

दो० कामक्रोधलोभादिमद, प्रबल मोह कै धार ।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद, मायारूपीनारि॥

सुन मुनि कह पुरान श्रुति संता । मोह विपिन कहँ नारि वसंता ॥
जप तप नेम जलाशय भारी । होइ ग्रिषम सोषैं सब नारी ॥
काम क्रोध मद मत्सर भेका । इन्हहि हरष प्रद वरषा एका ॥
दुरवासना कुमुद समुदाई । तिन्हकहँ शरद सदा सुखदाई ॥
धरम सकल सरसीरुह बृन्दा । होइहिमतिनहिंदेतिदुखमन्दा ॥
पुनि ममता जवास बहुताई । पलुइहनारि शिशिर ऋतु पाई ॥
पाप उलूक निकर सुखकारी । नारि निविड़ रजनी अँधियारी ॥
बुधिबल शील सत्य सब मीना । बनसीसम तियकहहि प्रवीना ॥

दो० अवगुन मूल शूल प्रद, प्रमदा सब दुखखानि।
तातें कीन्ह निवारन, मुनिमैंयहजियजानि ॥

पुनि नारद बोले कि हे नाथ संतन के लक्षण कहिये तब रामजी कहने लगे।

षट् विकार जित अनघ अकामा। अचलअकिंचनशुचिसुखधामा॥
अमित बोध अनीह मित भोगी। सत्यसार कवि कोविद योगी॥
सावधान मानद मद हीना। धीर धरम गति परम प्रवीना॥

दो० गुनागार संसार सुख, रहित विगत सन्देह।
तजिममचरनसरोजप्रिय, तिन्हकहँ देह न गेह॥

निजगुण श्रवणसुनत सकुचाहीं। पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं॥
सम शीतल नहिं त्यागहि नीती। सरल सुभाव सबहिं सन प्रीती॥
जप तप व्रत दम संयम नेमा। गुरु गोविंद विप्र पद प्रेमा॥
सरधा छमा मयत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीत अमाया॥
विरति विवेक विनय विज्ञाना। बोध यथारथ वेद पुराना॥
दंभ मान मद करहिं न काऊ। भूलि न देहिं कुमारग पाऊ॥
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित परहितरत शीला॥
सुनु मुनि साधुन्ह के गुण जेते। कहि न सकहिं शारद श्रुति तेते॥

किष्किन्धाकाण्डम्।

जब पवनसुत से मारग में मिलाप हुवा और श्रीहनुमानजीने सब कुशल पूछा तब भगवान ने कहा है।

सुनि बोले रघुवंश कुमारा। विधिकर लिखा को मेटनहारा॥

हनुमानजीके अस्तुत करने पर श्रीरघुनाथजीने हनुमानजीको उरसे लगाया और कहा।

समदरशी मोहि कह सब कोऊ । सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ ॥

दो० सो अनन्य जाके असि, मति न टरै हनुमंत ।
मैं सेवक सचराचर, रूप स्वामि भगवंत ॥

सुग्रीव के साथ मित्रता हुई तब मित्र के गुण को कहा है ।

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी । तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी ॥
निजदुखगिरिसमरजकरिजाना । मित्रके दुख रज मेरु समाना ॥
जिन्हके असमति सहज न आई । ते शठ हठ कत करत मिताई ॥
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा । गुन प्रगटे अवगुनहिं दुरावा ॥
देत लेत मन शंक न धरई । बल अनुमान सदा हित करई ॥
विपत काल कर सतगुन नेहा । श्रुति कह संत मित्र गुन एहा ॥
आगे कह मृदु वचन बनाई । पाछे अनहित मन कुटिलाई ॥
जाकर चित अहिगति समभाई । असकुमित्र परिहरेहिं भलाई ॥
सेवक शठ नृप कृपन कुनारी । कपटी मित्र शूल सम चारी ॥

जब श्रीरामजीने बालि को मारा तब उसने श्रीरघुनाथजीकी ओर देख कर पूछा कि हे नाथ मोहि केहि कारण मारा तब कहा है ।

अनुज वधू भगिनी सुत नारी । सुनु शठ ए कन्या सम चारी ॥
इन्हहिं कुदृष्टि बिलोकै जोई । ताहि वधे कछु पाप न होई ॥

तारा को विकल देखिकै श्रीरामजीने माया को हरि लिया और ज्ञान को दिया और कहा ।

क्षिति जल पावक गगन समीरा । पंच रचित यह अधम शरीरा ॥
प्रगट सो तनु तव आगे सोवा । जीव नित्य केहि लागि तुम रोवा ॥

स्फटिकशिला पर बैठे हुए श्रीराजा रामचन्द्रजी लक्ष्मणजीसे अनेकाअनेक नीत और विवेक की कथा कहते हैं ।

दो० लक्ष्मण देखहु मोरगण, नाचत वारिद पेखि।
गृहीविरतिरत हरषजस, विष्णुभगतकहँ देखि॥

दामिनि दमकि रही घनमाही। खल कै प्रीत यथा थिर नाही॥
बरषहि जलद भूमि नियराये। यथा नवहिं बुध विद्या पाये॥
बुंद अघात सहैं गिर कैसे। खल के वचन संत सह जैसे॥
क्षुद्र नदी भरि चली तोराई। जस थोरेहु धन खल इतराई॥
भूमि परत भा ढावर पानी। जिम जीवहि माया लपटानी॥
सिमिटिसिमिटिजलभरहिंतलावा।जिमिसदगुणसज्जनपहँआवा॥
सरिताजल जलनिधि महुँ जाई। होइअचल जिमिजिव हरिपाई॥

दो० हरित भूमि तृन संकुल, समुझि परै नहिं पंथ।
जिम पाखंडी वाद ते, गुप्त होहिं सदग्रंथ॥

दादुर धुनि चहुँ दिशा सुहाई। वेद पढ़ै जनु वटु समुदाई॥
नव पल्लव भए विटप अनेका। साधक मन जसमिलेइ विवेका॥
अर्क जवास पात विनु भएऊ। जस सुराज खल उद्यम गएऊ॥
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी। करैं क्रोध जिम धरमहि दूरी॥
शशि संपन्न शोह महि कैसी। उपकारी की संपति जैसी॥
निशि तम घन खद्योत विराजा। जनु दंभिन कर मिला समाजा॥
महा वृष्टि चलि फूटि कियारी। जिम स्वतंत्र भए बिगरहिं नारी॥
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिम बुध तजहिं मोह मद माना॥
देखिय चक्रवाक खग नाहीं। कलिहिं पाइ जिम धरम पराहीं॥
ऊसर बरषै तृण नहिं जामा। जिमिहरिजन हिय उपज न कामा॥
विविध जंतु संकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ़ जिम पाइ सुराजा॥
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इंद्रियगन उपजै ज्ञाना॥

दो० कबहुँ प्रबल बह मारुत, जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।
जिम कुपूत के ऊपजे, कुल सद्धर्म नशाहिं॥
कबहुँ दिवस महँ निविड तम, कबहुँक प्रगट पतंग।
बिनशई उपजई ज्ञान जिम, पाइ सुसंग कुसंग॥

वर्षा विगत शरद ऋतु आई। लक्ष्मण देखहु परम सुहाई॥
उदित अगस्ति पंथ जल सोषा। जिम लोभहिं सोखै संतोषा॥
सरिता सर निर्मल जल सोहा। संत हृदय जस गत मद मोहा॥
रस रस सोख सरित सर पानी। ममता त्याग करहिं जिम ज्ञानी॥
जानि शरद ऋतु खंजन आए। पाइ समय जिमि सुकृति सुहाए॥
पंक न रेणु शोह अस धरनी। नीति निपुन नृपके जस करनी॥
जल संकोच विकल भइ मीना। अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना॥
बिनु घन निरमल सोह अकाशा। हरिजन इव परिहर सब आशा॥
कहुँ कहुँ वृष्टि शारद ऋतु थोरी। कोउ एक पाव भगति जिमि मोरी॥

दो० चले हरषि तजि नगर नृप, तापस बनिक भिखारि।
जिमि हरि भगति पाय श्रम, तजहि आश्रमी चारि॥

सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरि शरन न एकौ बाधा॥
फूले कमल शोह सर कैसे। निर्गुन ब्रह्म सगुन भए जैसे॥
चक्रवाक मन दुख निशि देखी। जिमि दुर्जन पर संपति देखी॥
चातक रटत तृषा अति ओही। जिम सुख लहै न शंकरद्रोही॥
शरदातप निशि शशि अपहरई। संत दरश जिमि पातक टरई॥
मशक दंश बीते हिम त्रासा। जिम द्विज द्रोह किये कुल नासा॥

दो० भूमि जीव संकुल रहे, गये शरद ऋतु पाय।
सतगुरु मिलेते जाय जिमि, शंशय भ्रम समुदाय॥

सुन्दरकाण्डम् ।

विभीषण को देखकर वंदरोंने अनुमान किया कि कोई भेद लेन को आया है इस पर भगवान ने कहा है कि ।

दो० शरनागति कहँ जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पाँवर पापमय, तिनहि विलोकत हानि ॥

कोटि विप्र वध लागहि जाहू । आये शरण तजौं नहिं ताहू ॥
सनमुख होइ जीव मोहि जबही । जनम कोटि अघ नासौं तबही ॥
पापवंत कर सहज सुभाऊ । भजनु मोर तेहि भाव न काऊ॥

जब विभीषण को भगवान ने उरसे लगा लिया तब विभीषण ने दीनता प्रगट किया उस पर श्रीरामचन्द्रजी ने पुनः कहा ।

जो नर होइ चराचर द्रोही । आवइ सभय शरण तकि मोही ॥
तजि मद मोह कपट छल नाना । करौं सद्य तेहि साधु समाना ॥
जननी जनक बंधु सुत दारा । तनु धन भवन सुहृद परिवारा ॥
सबकी ममता त्याग बटोरी । मम पद मनहि बांधि वरडोरी ॥
सम दरशी इच्छा कुछ नाही । हरष शोक भय नहि मनमांही॥
अस सज्जन मम उर बस कैसे । लोभी हृदय बसत धन जैसे ॥
तुम्हसारिखे संत प्रिय मोरे । धरें देह नहि आन निहोरे ॥

दो० सगुन उपासक परमहित, निरत नीति दृढ़ नेम ।
ते नर प्रान समान मम, जिनके द्विजपद प्रेम ॥

सिंधु ने श्रीरामजी के विनय को न माना तब भगवान बोले ।

दो० विनय न मानत जलधि जड़, गए तीन दिन बीति ।
बोले राम सकोप तब, भय बिनु होइ न प्रीत ॥

शठसन विनय कुटिल सन प्रीती । सहज कृपिनसन सुन्दर नीती ॥

ममता रत सन ज्ञान कहानी । अति लोभी सन विरति बखानी ॥
क्रोधहि सम कामिहि हरिकथा । ऊसर बीज बोये फल जथा ॥

लंकाकाण्डम् ।

जब सेतु बन चुका तब भगवान को वह जगह बहुत ही अच्छी मालूम हुई उसी समय वहां पर शिव का अस्थापना कर यह कहा ।

करिहौं इहां शंभु थापना । मोरे हृदय परम कलपना ॥
लिंग थापि विधिवत करि पूजा । शिव समान प्रिय मोंहि न दूजा ॥
शिव द्रोही मम दास कहावा । सो नर सपनेहु मोहि न पावा ॥
शंकर विमुख भगति चह मोरी । सो नारकी मूढ़ मति थोरी ॥
दो० शंकर प्रिय मम द्रोही, शिव द्रोही मम दास ।
ते नर करहिं कलप भरि, घोर नरक महँ वास ॥
जे रामेश्वर दरशनु करिहहिं । तेतनु तजि मम धाम सिधरिहहिं ॥
जो गंगाजल आनि चढ़ाइहिं । सो सायुज्य मुक्ति नर पाइहिं ॥
होइ अकाम जो छल तजि सेइहि । भगति मोर तेहि शंकर देइहि ॥
मम कृत सेतु जो दरशन करिहहिं । सो विनु श्रम भवसागर तरहहिं॥

जब लक्ष्मणजी के शक्तीबाण लगा और हनुमानजी अर्ध रात तक औषध लेकर न आये तब भगवान ने नरलीला दिखाया है ।

सुत वित नारि भवन परिवारा । होहि जाहिं जग बारहिं बारा ॥
अस बिचारि जिय जागहु ताता । मिलहिं न जगत सहोदर भ्राता ॥
जथा पंख बिनु खगपति दीना । मनि बिनु फनि करिवर करहीना॥
अस मम जिवन बंधु बिन तोंही । जो जड़ दैव जियावै मोंही ॥

जब विभीषण ने भगवान को विना रथके देखा तो कहने लगे कि हे नाथ आप विना रथ के एक ऐसे वीर को किस प्रकार जीतेंगे तब रामजी बोले ।

सौरज धीरज तेहि रथ चाका । सत्य शील दृढ़ ध्वजा पताका ॥
बल विवेक दम परहित घोरे । क्षमा कृपा समता रजु जोरे ॥
ईश भजन सारथी सुजाना । विरति चर्म संतोष कृपाना ॥
दान परशु बुधि शक्ति प्रचंडा । घर विज्ञान कठिन कोदंडा ॥
अमल अचल मन त्रोण समाना । संयम नियम सिलीमुख नाना ॥
कवच अभेद विप्रपद पूजा । एहि सम विजय उपाय न दूजा ॥
सखा धरम मय अस रथ जाके । जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके ॥

दो० महा अजय संसार रिपु, जीति सकै सो वीर ।
जाके अस रथ होइ दृढ़, सुनहु सखा मति धीर ॥

जब लंकेश सामने आया और कहा कि हे राम आज मैं तुम को कालके हवाले करताहूं तब रामजी ने कहा ।

छन्द ॥

जनि जल्पना करि सुयश नाशिह नीत सुनहि करहिं क्षमा ।
संसार महुँ पूरुष त्रिविध पाटल रसाल पनस समा ॥
इक सुमन प्रद इक सुमन फल इक फलै केवल लागहीं ।
एक कहहिं कहहिं करहिं अपर एक करहिं कहत न बागहीं ॥

उत्तरकाण्डम् ।

श्रीरामचन्द्रजी सब को रास्ते में आते हुये मनोहर नग्र को दिखा रहे हैं और हे हनुमान अंगद और लंकेश यह देश बहुत ही पावन और रुचिर है ।

जद्यपि सब वैकुंठ बखाना । वेद पुरान विदित जग जाना ॥
अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ । यह प्रसंग जाने कोउ कोऊ ॥
जनम भूमि मम पुरी सोहावनि । उत्तर दिशि वह सरजू पावनि ॥
जामज्जनते बिनहि प्रयासा । मम समीप नर पावहि वासा ॥
अति प्रिय मोंहि यहां के वासी । मम धामदा पुरी सुखरासी ॥

एक दिवस रामजी ने अपने सव सखा को बुलाया और प्रेम सहित निकट बैठारकर यह वचन कहे ।

सब मम प्रिय नाहि तुमहि समाना । मृषा न कहौं मोर यह बाना ॥
सबके प्रिय सेवक यह नीती । मोरे अधिक दास पर प्रीती ॥

दो० अब गृह जाहु सखा सकल, भजेहु मोहि दृढ़ नेम ।
सदा सर्वगत सर्वहित, जानि करेहु अति प्रेम ॥

एकबार भ्रातन्हि समेत और पवनकुमार सहित श्रीरामजी सुन्दर उपवन देखने गये थे समय जानकर सनकादिक आगये तब भगवान ने हाथ पकड़ कर बैठारा और मनोहर वचन उचारा ।

आजु धन्य मैं सुनहु मुनीशा । तुम्हरे दरश जाहि अघ खीशा ॥
बड़े भाग पाइय सतसंगा । बिनहि प्रयास होइ भव भंगा ॥

दो० संत पंथ अपवर्ग कर, कामी भव कर पंथ ।
कहहि संत कवि कोविद, श्रुति पुराण सदग्रंथ ॥

सनकादिक के चले जाने पर भरथजी ने कहा कि हे नाथ मैं श्रीमुख से संत के लक्षन सुना चाहता हूं सो कहिये तब भगवान ने वर्नन किया ।

संतन के लक्षन सुनु भ्राता । अगनित श्रुति पुरान विख्याता ॥

संत असंतन्ह की अस करनी । जिमि कुठार चंदन आचरनी ॥
काटै परशु मलय सुनु भाई । निज गुन देइ सुगंध बसाई ॥

दो० ताते सुर शीसन्हि चढ़त, जग वल्लभ श्रीखंड ।
अनल दाहि पीटत घनहि, परशु वदन यह दंड ॥

विषय अलम्पट शील गुणाकर । पर दुख दुख सुख सुख देखे पर ॥
सम अभूत रिपु मिमद विरागी । लोभामरष हरष भय त्यागी ॥
कोमल चित दीनन्हि पर दाया । मन वच क्रम मम भगति अमाया ॥
सबहिं मान प्रद आपु अमानी । भरथ प्रान सम मम ते प्रानी ॥
विगत काम मम नाम परायन । सांति विरति विनती मुदितायन ॥
शीतलता सरलता मयत्री । द्विजपद प्रीत धरम जनयत्री ॥
ए सब लक्षण बसहि जासु उर । जानेहु तात संत संतत फुर ॥
सम दम नियम नीति नहि डोलहिं । परुष वचन कबहूँ नहि बोलहि ॥

दो० निंदा अस्तुति उभय सम, ममता मम पद कंज ।
ते सज्जन मम प्रान प्रिय, गुन मंदिर सुख पुंज ॥

सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ । भूलेहु संगति करिय न काऊ ॥
तिन्हकर संग सदा दुखदाई । जिमि कपिलहिं घालै हरहाई ॥
खलन्ह हृदय अति तापविशेषी । जरहि सदा पर संपति देषी ॥
जहँ कहुँ निंदा सुनहि पराई । हर्षहि मनहु परी निधि पाई ॥
काम क्रोध मद लोभ परायन । निर्दय कपटी कुटिल मलायन ॥
बयरु अकारण सब काहूसों । जो करु हित अनहित ताहूसों ॥
झूठै लेना झूठै देना । झूठै भोजन झूठ चबेना ॥
बोलहि वचन मधुर जिम मोरा । खाहिं महा अहि हृदय कठोरा ॥

दो० परद्रोही परदार रत, परधन पर अपवाद ।
ते नर पामर पापमय, देह धरे मनुजाद ॥

लोभइ ओढ़न लोभइ डासन । शिश्नोदर पर यमपुर त्रासन ॥
काहू की जौ सुनहि बड़ाई । स्वास लेहि जनु जूड़ी आई ॥
बैर न विग्रह आस न त्रासा । सुखमय ताहि सदा सब आसा ॥
अनारंभ अनिकेत अमानी । अनघ अरोष दक्ष विज्ञानी ॥
प्रीत सदा सज्जन संसर्गा । तृण सम विषय स्वर्ग अपवर्गा ॥
भगतिपक्ष हठ नहि शठताई । दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई ॥

दो० मम गुन ग्रामनाम रत, गत ममता मद मोह ।
ताकर सुख सोइ जानैं, परानन्द सन्दोह ॥

कागभुशुंड ने भगवान से भगति का वरदान मांगा तब श्रीरामजी कहने लगे ।

सब सुखखानि भगति तैं मांगी । नहिकोउजगतोहिसमबड़भागी॥
जो मुनि कोटि यतन नहि लहही । जे जप जोग अनल तन दहही ॥
रीझोउँ देखि तोरि चतुराई । मांगेहु भगति मोहि अति भाई ॥
भगति ज्ञान विज्ञान विरागा । जो सब चरित रहस्य विभागा ॥

दो० माया संभव भरम सब, अब नहि व्यापिहि तोहि।
जानेसि ब्रह्म अनादि अज, अगुन गुनाकर मोहि ॥
मोहि भगत प्रिय संतत, अस बिचारि सुनु काग ।
काय वचन मन मम पद, करसु अचल अनुराग॥

मम माया संभव संसारा । जीव चराचर विविध प्रकारा ॥
सब मम प्रिय सब मम उपजाए । सबतें अधिक मनुज मोहिभाये॥
तेन्ह महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी॥तिन्ह महुँ निगम धरमुअनुसारी॥
तिन्ह महँ प्रिय विरक्त अरु ज्ञानी। ज्ञानिहुतें अति प्रिय विज्ञानी ॥
तिन्ह तें पुनि मोहि प्रिय निज दासा। जेहि गति मोर न दूसरि आसा॥

पुनि पुनि सत्य कहौं तोहि पाहीं । मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं॥
भगति हीन विरंचि किन होई । सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई॥
भक्तिवंत अति नीचौ प्रानी । मोहि प्रान प्रिय असि समवानी॥

दो० शुचिसुशीलसेवक सुमति, प्रिय कहु काहि न लाग।
श्रुतिपुरानकह नीतिअसि, सावधान सुनु काग॥

एक पिता के विपुल कुमारा । होइ पृथक गुण शील अचारा॥
कोउ पंडित कोउ तापस ज्ञाता । कोउ धनवंत शूर कोउ दाता॥
कोउ सरवज्ञ धरमरत कोई । सब पर पितहि प्रीत सम होई॥
कोउ पितु भक्त वचन मन कर्मा । सपनेहु जान न दूसर धर्मा॥
सो सुत प्रिय पितु प्रान समाना । यद्यपि सो सब भाँति अजाना॥
यहि विधि जीव चराचर जेते । त्रिजग देव नर असुर समेते॥
अखिल विश्व यह मोर उपाया । सब पर मोहि बराबर दाया॥
तिन्ह महँ जो परिहरि मदमाया । भजहिं मोहिमनवचअरुकाया॥

दो० पुरुष नपुंसक नारि नर, जीव चराचर कोइ।
सर्व भाव भज कपट तजि, मोहि परम प्रिय सोइ॥

सो० सत्य कहौं खग तोंहि, शुचि सेवक मम प्रानप्रिय।
असविचारिभजमोंहि, परिहर आस भरोस सब॥

जब काहू के देखहि विपती । सुखी होहि मानहु जग नृपती॥
स्वारथरत परिवार विरोधी । लंपट काम लोभ अति क्रोधी॥
मातु पिता गुरु विप्र न मानहि । आपु गये अरु घालहि आनहि॥
करहि मोह वश द्रोह परावा । संत संग हरि कथा न भावा॥
अवगुन सिंधु मंदमति कामी । वेद विदूषक परधन स्वामी॥
विप्र द्रोह सुर-द्रोह विशेषा । दंभ कपट जिय धरे सुवेषा॥

दो० ऐसे अधम मनुज खल, कृत युग त्रेता नाहिं।
द्वापर कछुक वृंद बहु, होइहहिं कलियुग माहिं॥
परहित सरिस धरम नहिं भाई। पर पीडा सम नहिं अधमाई॥
निरनय सकल पुरान वेद कर। कहउँ तात जानहिं कोविदनर॥
नर शरीर धरि जे परपीरा। करहिं ते सहहिं महाभवभीरा॥
करहिं मोह वश नर अघ नाना। स्वारथरत परलोक नसाना॥
कालरूप तिन्हकहुँ मैं भ्राता। शुभअरुअशुभ करमफलदाता॥
अस विचारि जो परम सयाने। भजहि मोंहि संसृतिदुखजाने॥
त्यागहि करम शुभाशुभ दायक। भजहि मोंहि सुरनर मुनिनायक॥
संत असंतन्ह के गुन भाखे। ते न परहिं भव जिन्ह लखिराखे॥
दो० सुनहु तात माया कृत, गुन अरु दोष अनेकु।
गुनयहउभय न देखिअहि, देखिय सो अविवेक॥

एक बार रघुनाथजी ने सब पुरवासियों को बुलाया जब सब लोग आगये तब भगतभयभंजन कहने लगे।

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई। मम अनुशासन मानै जोई॥
बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सदग्रंथन्हि गावा॥
साधन धाम मोक्षकर द्वारा। पाइ न जेइँ परलोक संवारा॥
दो० सो परत्र दुख पावई, शिर धुनि धुनि पछिताय।
कालहि कर्महि ईश्वरहिं, मिथ्या दोष लगाय॥
यहि तनुकर फल विषय न भाई। सरग स्वल्प अंतहुँ दुखदाई॥
नरतनु पाय विषय मनु देहीं। पलटि सुधा ते शठ विषु लेहीं॥
ताहि कबहुँ भल कहै न कोई। गुंजा गहै परस मनि खोई॥
आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनिन भ्रमत जीव अविनासी॥

फिरत सदा माया के प्रेरे। काल कर्म सुभाव गुन घेरे॥
कवहुँक करि करुना नर देही। देत ईश विनु हेतु सनेही॥
नरतनु भववारिधि कहँ वेरा। सनमुख मरुत अनुग्रह मेरा॥
करनधार सदगुरु दृढ़ नावा। दुर्लभ साजु सुलभ करि पावा॥
दो० जे न तरै भवसागर, नर समाज अस पाइ।
सो कृतनिन्दक मंदमति, आतमहन गति जाइ॥
जो परलोक इहाँ सुख चहहू। सुनि ममवचन हृदय दृढ़ गहहू॥
सुलभ सुखद मारग यह भाई। भक्ति मोरि पुरान श्रुति गाई॥
ज्ञान अगम प्रत्यूह अनेका। साधन कठिन न मन कहुँ टेका॥
करत कष्ट वहु पावै कोऊ। भगतिहीनमोहिप्रियनहिसोऊ॥
भगति स्वतंत्र सकल गुनखानी। विनु सतसंग न पावहि प्रानी॥
पुण्यपुंज विनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता॥
पुण्य एक जगमहुँ नहिं दूजा। मन क्रम वचन विप्र पद पूजा॥
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपट करै द्विज सेवा॥
दो० औरौ एक गुपुत मत, सबहि कहौं कर जोरि।
शंकर भजन विना नर, भगति न पावै मोर॥
कहहु भगति पथ कवन प्रयासा। जोग न मख जप तप उपवासा॥
सरल सुभाव न मन कुटिलाई। यथा लाभ संतोष सदाई॥
मोर दास कहाइ नर आसा। करइ त कहहु कहाँ विश्वासा॥
वहुत कहौं का कथा बढ़ाई। यहि आचरन बस्य मैं भाई॥

तृतीय अध्याय।

नीति और धर्म॥

बिनु सतसंग विवेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई॥
सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परसि कुधातु सुहाई॥
बिधबस सुजन कुसंगति परहीं। फनिमनिसमनिजगुनअनुसरहीं
बायस पलिअहि अति अनुरागा। होइ निरामिष कवहुं कि कागा॥
बिछुरत एक प्रान हरिलेहीं। मिलत एक दारुन दुख देहीं॥
दो० भलो भलाई पै लहै, लहै निचाई नीच।
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच॥
कहहिं बेद इतिहास पुराना। बिधि प्रपंच गुन अवगुनसाना॥
दो० जड़ चेतन गुन दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारि बिकार॥
बिधुबदनी सब भाँति सँवारी। सोह न बसन बिना बरनारी॥
तासु सप्रेम जपत अनयासा। भगत होहिं मुद मंगल वासा॥
नहिं कलि करम न भगति विवेकू। राम नाम अवलंबन एकू॥
सकल विघिन व्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपा विलोकहिं जेही॥
दो० अति विचित्र रघुपति चरित, जानहिं परम सुजान।
जे मतिमंद विमोहवश, हृदय धरहिं कछु आन॥
होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तरक बढ़ावहि साखा॥
नहिं कोउ अस जनमा जगमाहीं। प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं॥
जद्यपि जग दारुन दुख नाना। सबतें कठिन जाति अपमाना॥
दो० कह मुनीश हिमवंत सुनु, जो विधि लिखा लिलारु।
देव दनुज नर नाग मुनि, कोउ न मेटनिहारु॥

समरथ कहँ नहिं दोष गुसाईं । रवि पावक सुरसरि की नाईं ॥
मातु पिता गुरु प्रभु कै वानी । विनहिं विचार करिय शुभजानी ॥
गुरु के वचन प्रतीति न जेही । सपनेहु सुगम न सुखसिधि तेही ॥
परहित लागि तजै जो देही । संतत संत प्रशंसहिं तेही ॥
सासति करि पुनि करहिं पसाऊ । नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ ॥
शिवपदकमल जिनहिं रति नाहीं । रामहिं ते सपनेहुँ न सोहाहीं ॥
विनु छल विश्वनाथ पद नेहू । राम भगत कर लक्षन एहू ॥
शिव सम को रघुपति व्रतधारी । विनु अघ तजी सती अस नारी ॥
राम कीन्ह चाहहिं सो होई । करै अन्यथा अस नहिं कोई ॥
अति प्रचंड रघुपति कै माया । जेहि न मोह अस को जग जाया ॥

दो० तुलसी जसि भवितव्यता, तैसी मिलै सहाय ।
आपु न आवै ताहि पै, ताहि तहां लै जाय ॥

वड़े सनेह लघुन पर करहीं । गिरि निज शिरन सदा तृण धरहीं ॥
जलधि अगाध मौलि वहु फेनू । संतत धरणि धरत शिर रेनू ॥

दो० भरद्वाज सुनु जाहि जब, होत विधाता बाम ।
धूरि मेरुसम जनक यम, ताहि व्यालसम दाम ॥

मानहिं मातु पिता नहिं देवा । साधुन सन करवावहिं सेवा ॥
जिन्हके यह आचरण भवानी । ते जानहु निशिचरसम प्रानी ॥
हरि व्यापक सर्वत्र समाना । प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना ॥
देश काल दिशि विदिशिहु माहीं । कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं ॥
रघुपति बिमुख यतन करि कोरी । कवन सकै भव बन्धन छोरी ॥
मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई । भजत कृपा करिहैं रघुराई ॥
जासु त्रास डर कहँ डर होई । भजनप्रभाव देखावत सोई ॥

जिनके लहहिं न रिपु रण पीठी। नहिं लावहिं परतिय मन डीठी॥
मंगल लहहिं न जिनके नाहीं। ते नरवर थोरे जग माहीं॥
जेहि पर जेहि कर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलै न कछु संदेहू॥
टेढ़ जानि शंका सबकाहू। वक्र चंद्रमहिं ग्रसै न राहू॥
को न कुसंगति पाइ नशाई। रहै न नीचमते चतुराई॥
नहिं असत्य सम पातकपुंजा। गिरिसम होहिं कि कोटिकगुंजा॥
सत्य मूल सब सुकृत सुहाए। वेद पुराण विदित मनु गाए॥
सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी॥
तनय मातु पितु पोषनिहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा॥
धन्य जन्म जगतीतल तासू। पितहि प्रमोद चरित सुनि जासू॥
चारि पदारथ करतल ताके। प्रिय पितु मातु प्रान सम जाके॥

दो० काह न पावकु जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करइ अबला प्रबल, केहि जग कालु न खाइ॥

अंतहु उचित नृपहिं बनबासू। वयबिलोकि हियँ होत हरासू॥
पाहनकृमि जिमि कठिन सुभाऊ। तिनहिं कलेशु न कानन काऊ॥
यहिंते अधिकु धरमु नहिं दूजा। सादर सासु ससुर पद पूजा॥
मैं पुनि समुझि दीख मनमाहीं। पिय वियोग सम दुख जग नाहीं॥
तनु धन धाम धरनि पुर राजू। पतिविहीन सब शोक समाजू॥
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृप अवशि नरक अधिकारी॥
अवध तहाँ जहँ राम निवासू। तहहिं दिवसु जहँ भानु प्रकाशू॥
पुत्रवती जुवती जग सोई। रघुवरभगतु जासु सुत होई॥
नतरु बाँझ भलि वादि बियानी। राम बिमुख सुत ते हितहानी॥
सकल सुकृतकर बर फल एहू। राम सीय पद सहज सनेहू॥

शुभ अरु अशुभ करम अनुहारी। ईश देइ फल हृदय विचारी॥
करै जो कर्म पाव फल सोई। निगम नीति अस कह सव कोई॥

दो० और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग।
अति विचित्र भगवंत गति, को जग जानइ योग॥

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सव भ्राता॥
मोह निसा सव सोवनिहारा। देखहिं सपन अनेक प्रकारा॥
यहि जग जामिनि जागहिं जोगी। परमारथी प्रपंच वियोगी॥
जानिअ तवहिं जीव जग जागा। जव सव विषय विलास विरागा॥
होइ विवेक मोह भ्रम भागा। तव रघुनाथ चरन अनुरागा॥
सखा परम परमारथ एहू। मन क्रम वचन राम पद नेहू॥
राम ब्रह्म परमारथरूपा। अविगत अलख अनादि अनूपा॥
धर्म न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान वखाना॥
रामहिं केवल प्रेमु पियारा। जानि लेहु जो जाननिहारा॥
विधिहु न नारि हृदयगति जानी। सकल कपट अघ अवगुन खानी॥
अस को जीव जंतु जग माहीं। जेहि रघुनाथ प्रान प्रिय नाहीं॥
शोचिय विप्र जो वेद विहीना। तजि निज धर्म विषय लयलीना॥
शोचियनृपति जोनीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना॥
शोचिय वयसु कृपण धनवानू। जो न अतिथि शिवभक्ति सुजानू॥
शोचिय शूद्र विप्र अपमानी। मुखर मान प्रिय ज्ञान गुमानी॥
शोचिय पुनि पतिवंचक नारी। कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी॥
शोचिय वटु निज व्रत परिहरई। जो नहिं गुरु आयसु अनुसरई॥

दो० शोचिय गृही जो मोहवस, करइ करमपथ त्याग।
शोचिय जती प्रपंचरत, विगत विवेक विराग॥

बैषानस सोइ शोचन जोगू । तप विहाय जेहि भावै भोगू ॥
शोचिय पिशुन अकारन क्रोधी । जननि जनक गुरुबन्धु बिरोधी ॥
सब बिधि शोचिय पर अपकारी । निजतनु पोषक निरदय भारी ॥
शोचनीय सबही बिधि सोई । जो न छाड़ि छल हरिजन होई ॥
गुरु पितु मातु स्वामि हित बानी । सुनिमनमुदितकरियभलजानी॥
वादि वसन बिनु भूषन भारू । वादि विरति बिनु ब्रह्म बिचारू ॥
सरुज शरीर वादि बहु भोगा । बिनु हरि भक्ति जाय जप योगा ॥

दो० ग्रह ग्रहात पुनि बात बश, तेहि पुनि बीछी मार ।
ताहि पियाइअ वारुनी, कहहु कवन उपचार ॥

अहि अघ अवगुन नहिं मनि गहई । हरइ गरल दुख दारिद दहई ॥
साधु समाज न जाकर लेखा । राम भगत महँ तासु न रेखा ॥
जाय जियत जग सो महिभारू । जननी जौवन बिटप कुठारू ॥
राम राम कहि जे जमुहाहीं । तिनहिं न पाप पुंज समुहाहीं ॥
बारक राम कहत जग जेऊ । होत तरन तारन नर तेऊ ॥
जो अपराध भगत कर करई । राम रोष पावक सो जरई ॥
करम प्रधान विश्व करि राखा । जो जस कर सो तस फल चाखा॥
अनुचित उचित काज कछु होई । समुझि करिय भल कह सबकोई॥
सहसा करि पाछे पछिताहीं । कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं ॥
जे गुरु पद अंबुज अनुरागी । ते लोकहुँ बेदहुँ बड़भागी ॥
जिन्हहिं निरखि मगु सापिनि बीछी। तजहिं बिषम बिष तामस तीछी॥
सोह न राम प्रेम बिनु ज्ञाना । कर्णधार बिनु जिमि जलयाना॥
कसे कनक मनि पारिख पाए । पुरुष परखियहि समउ सुभाए ॥
प्रभु अपने नीचहुँ आदरहीं । अगिनि धूम गिरि शिर तृन धरहीं॥
सो सुख करम धरम जरि जाऊ । जहँ न राम पद पंकज भाऊ ॥

धीरज धरम मित्र अरु नारी। आपदकाल परिखियहि चारी॥
सेवक सुख चह मान भिखारी। व्यसनीधनशुभगतिविभिचारी॥
शस्त्री मर्मी प्रभु शठ धनी। वैद वन्दि कवि भानस गुनी॥
जाकर नाम मरत मुख आवा। अधमउ मुकुत होइ श्रुतिगावा॥
परहित बस जिन्हके मनमाहीं। तिन्हकहँ जगदुर्लभ कछुनाहीं॥
सुनहु उमा ते लोक अभागी। हरितजि होहिविषयअनुरागी॥
पूजिय विप्र शील गुन हीना। शूद्र न गुन गन ज्ञान प्रवीना॥

दो० ताततीनिअतिप्रबलखल, काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि विज्ञानधाम मन, करहिंनिमिषमहुँ क्षोभ॥
लोभ के इच्छा दंभ बल, काम के केवल नारि।
क्रोध के परुषबचन बल, मुनिवर कहहिं बिचारि॥

क्रोध मनोज लोभ मद माया। छूटहिं सकल राम की दाया॥

दो० फलभर नम्र बिटप सब, रहे भूमि नियराइ।
परउपकारी पुरुष जिमि, नमहि सुसंपति पाइ॥

सेवक सुत पितु मातु भरोसे। रहै अशोच बनै प्रभु पोसे॥
जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि विलोकत पातक भारी॥
जन्म जन्म मुनि यतन कराहीं। अंत राम कहिआवत नाहीं॥
सुर नर मुनि सबके यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती॥
नाथ विषय सम मद कछु नाहीं। मुनि मन छोभ करै छन माहीं॥
नारि नयन शर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निशि जो जागा॥
भानु पीठ सेइय उरआगी। स्वामिहि भजिय सकल छल त्यागी॥
तजि माया सेइय परलोका। मिटहिं सकल भव संभव शोका॥
देह धरे कर यह फल भाई। भजिय राम सब काम बिहाई॥

सोइ गुनज्ञ सोई बड़भागी । जो रघुवीर चरन अनुरागी ॥
जो रघुवीर चरण चित लावै । तिहिं सम धन्य न आन कहावै ॥
पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं । अति अपार भवसागर तरहीं ॥
कौन सो काज कठिन जगमाहीं । जो नहिं तात होहिं तुमपाहीं ॥

दो० भवभेषज रघुनाथ यश, सुनै जो नर अरु नारि ।
तिनकर सकल मनोरथ, सिद्ध करहिं त्रिपुरारि ॥
तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला एक अंग ।
तुलै न ताहि सकलमिलि, जो सुख लव सतसंग ॥

गरल सुधा रिपु करै मिताई । गोपद सिंधु अनल शितलाई ॥
गरुअ सुमेरु रेणु सम ताहीं । राम कृपाकरि चितवहिं जाही ॥
जाकर भक्त अनल जेइ सिरजा । जरा न सो तेहिकारण गिरिजा ॥

दो० सचिव वैद्य गुरुतीनि जौ, बोलहिं प्रिय प्रभु आस ।
राज धर्म तनु तीनि कर, होइ वेगहीं नाश ॥
काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरक कर पंथ ।
सब परिहरि रघुवीर पद, भजहु कहहिं सदग्रंथ ॥

शरन गये प्रभु काहु न त्यागा । विश्वद्रोहकृत अघ जेहिं लागा ॥
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना । जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना ॥

दो० शरनागति कहुँ जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पामर पापमय, तिनहिं बिलोकत हानि ॥

कोटि बिप्र वध लागहिं जाहू । आए शरन तजौं नहिं ताहू ॥

दो० तब लागि कुशल न जीव कहुँ, सपनेहु मन बिश्राम ।
जब लागि भजत न राम कहुँ, शोकधाम तजि काम ॥

काटे पै कदली फलै, कोटि जतन कोउ सींच।
विनय न मान खगेश सुनु, डाटेहिं पै नव नीच॥
नारि सुभाव सत्य कवि कहई। अवगुन आठ सदा उर रहही॥
साहस अनृत चपलता माया। भय अविवेक अशौच अदाया॥
सो० फूलै फलै न वेत, यदपि सुधा बरषे जलद।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं विरंचि शत॥
दो० प्रीति विरोध समान सन, करिय नीति अस आहि।
जौ मृगुपति वध मेडुकहिं, भलौ कहै को ताहि॥
हरि हर निंदा सुनहिं जे काना। होइ पाप गोघात समाना॥
परउपदेश कुशल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे॥
सगुन उपासक मोक्ष न लेही। तिन्हकहँ राम भगति निज देही॥
दो० ध्यान न पावहिं जाहि मुनि, नेति नेति कह वेद।
कृपासिंधु सोइ कपिन्ह सों, करत अनेक विनोद॥
उमा योग जप दान तप, नाना व्रत मख नेम।
राम कृपा नहिं तसि, जसि निष्केवल प्रेम॥
एक नारि व्रत रत नर झारी। ते मन वच क्रम पति हितकारी॥
बड़े भाग्य पाइ सतसंगा। विनहिं प्रयास होइ भवभंगा॥
दो० निंदा अस्तुति उभय सम, ममता मम पदकंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय, गुन मंदिर सुखपुंज॥
परहित सरिस धरम नहिं भाई। परपीड़ा सम नहिं अधमाई॥
नर शरीर धरि जे परपीरा। करहिं ते सहहिं महा भवभीरा॥
बड़े भाग्य मानुष तनु पावा। सुरदुर्लभ सदग्रंथन्हि गावा॥

साधन धाम मोक्ष कर द्वारा। पाइ न जेइँ परलोक सँवारा॥
पुण्यपुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृतिकर अंता॥
मोर दास कहाइ नर आसा। करइ त कहहु कहाँ बिश्वासा॥
स्वारथ मीत सकल जग माहीं। सपनेहु प्रभु परमारथ नाहीं॥
उपरोहिती कर्म अति मंदा। वेद पुरान सुमृति कर निंदा॥
भवसागर चह पार जो पावा। राम कथा ताकहुं दृढ़ नावा॥

दो० बिनु सतसंग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गए बिनु राम पद, होइ न दृढ़ अनुराग॥

मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किये योग जप ज्ञान विरागा॥
संत विशुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं रामकृपा करि जेही॥
मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही॥
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा। केहिके हृदय क्रोध नहिं दाहा॥

दो० ज्ञानी तापस शूर कवि, कोविद गुन आगार।
केहिकै लोभ बिड़ंबना, कीन्ह न एहि संसार॥
श्रीमद वक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगनयनी के नयन शर, को अस लागु न जाहि॥

गुनकृत सन्निपात नहिं केही। को न मान मद तेज निवेही॥
जोवनज्वर केहि नहिं बलकावा। ममता केहि कर जश न नशावा॥
मत्सर काहि कलंक न लावा। काहि न शोक समीर डोलावा॥
चिंता साँपिनि केहि नहिं खाया। को जग जाहि न ब्यापी माया॥
कीट मनोरथ दारु शरीरा। जेहि न लागु घुन को अस धीरा॥
सुत बित नारि ईखना तीनी। केहिकै मति इन्ह कृत न मलीनी॥
सुनहु राम कर सहज सुभाऊ। जन अभिमान न राखहिं काऊ॥

तातें करहिं कृपानिधि दूरी। सेवक पर ममता अति भूरी॥
जिमि शिशुतनु व्रण होइ गुसाँई। मातु चिराव कठिन की नाँई॥
मायावस्य जीव अभिमानी। ईशवस्य माया गुनखानी॥
परवश जीव स्ववश भगवंता। जीव अनेक एक श्रीकंता॥
मुधाभेद यद्यपि कृत माया। बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया॥

दो० रामचन्द्र के भजन बिनु, जो चह पद निर्वान।
ज्ञानवंत अपि सो नर, पशु बिनु पूंछ बिषान॥
राकापति षोड़श उगहिं, तारागन समुदाय।
सकल गिरिन्ह दवलाइय, रबि बिनु राति न जाय॥

भक्ति हीन गुन सुख सब कैसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे॥
भक्ति हीन सुख कवने काजा। अस बिचारि बोलेउ खगराजा॥
राम कृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई॥
जाने बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती॥
प्रीति बिना नहिं भक्ति दृढ़ाई। जिमि खगेश जलकी चिकनाई॥

सो० बिनु गुरु होइ कि ज्ञान, ज्ञान कि होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुराण, सुख कि लहहिं हरिभक्ति बिनु॥
कोउ विश्राम कि पाव, तात सहज संतोष बिनु।
चलै कि जल बिनु नाव, कोटि जतन पचि पचि मरिय॥

बिनु संतोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहु नाहीं॥
रामभजन बिनु मिटिहि कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा॥
बिनु विज्ञान कि समता आवै। कोउ अवकाश कि नभ बिनु पावै॥
श्रद्धा बिना धरम नहिं होई। बिनु महि गंध कि पावै कोई॥
बिनु तप तेज कि करु बिस्तारा। जल बिनु रस कि होइ संसारा॥

शील कि मिलु बिनु बुध सेवकाई। जिमि बिनु तेज न रूप गुसाँई ॥
निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा। परसि कि होइ बिहीन समीरा ॥
कवनिउँ सिद्धि कि बिनु बिश्वासा। बिनु हरिभजन न भवभय नासा॥

दो० बिनु विश्वास भगति नहिं, तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनहुँ, जीव कि लह बिश्रामु ॥
अस बिचारि मति धीर, तजि कुतर्क संशय सकल।
भजहु राम रघुबीर, करुनाकर सुंदर सुखद ॥

तीरथ अमित कोटि शत पावन। नाम अखिल अघ पुंज नशावन ॥
गुरु बिनु भवनिधि तरै न कोई। जो बिरंचि शंकर सम होई ॥
जप तप मख शम दम व्रत दाना। बिरति बिवेक जोग बिज्ञाना ॥
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा। तेहि बिनु कोउ न पावै छेमा ॥
जेहि तें कछु निज स्वारथ होई। तेहि पर ममता करु सब कोई ॥
सो पावन सो सुभग शरीरा। जो तनु पाइ भजै रघुबीरा ॥
राम बिमुख लहि बिधि सम देही। कवि कोबिद न प्रशंसहिं तेही ॥
कवनेहु जनम अवध बस जोई। राम परायन सो फुर होई ॥
हरै शिष्य धन शोक न हरई। सो गुरु घोर नरक महँ परई ॥
कलियुग योग यज्ञ नहिं ज्ञाना। एक अधार राम गुन गाना ॥

दो० कलियुग युग सम आन नहिं, जो नर कर विश्वास।
गाइ राम गुन गन विमल, भवतरु बिनहिं प्रयास॥
प्रगट चारि पद धरम के, कलि महुँ एक प्रधान।
जेन केन बिध दीन्हेउ, दान करै कल्यान ॥

काल कर्म नहिं ब्यापहि ताही। रघुपति चरण प्रीति अति जाही ॥

दो० हरि माया कृत दोष गुन, बिनु हरि भजन न जाहिं।
भजियरामसबकामतजि, अस बिचारि मन माहिं॥

शिव सेवा कर फल सुत सोई। अविरल भगति राम पद होई॥
कवि कोविद गावहिं अस नीती। खलसन कलह न भल नहिं प्रीती॥
उदासीन नित रहिय गुसाँई। खल परिहरिय स्वान की नाई॥
जे शठ गुरु सन ईर्षा करहीं। रौरव नरक कोटि जुग परहीं॥
अति संघरषण जौ कर कोई। अनल प्रगट चंदन सो होई॥
कबहुँ कि दुख सब कर हित ताके। तेहि कि दरिद्र परसमनि जाके॥
परद्रोही की होइ निसंका। कामी पुनि कि रहहि अकलंका॥
वंश कि रह द्विज अनहित कीन्हे। करम कि होहिं स्वरूपहि चीन्हे॥
काहुहिंसुमति किखलसँगजामी। शुभगति पाव कि परितियगामी॥
राजु कि रहै नीति विनु जाने। अघ कि रहै हरि चरित बखाने॥
भव कि परहि परमातम विंदक। सुखी कि होंहि कबहुँ हरि निंदक॥
पावन यश कि पुन्य विनु होई। बिनु अघ अजस कि पावे कोई॥
लाभ कि कछु हरि भक्तिसमाना। जिहि गावहिं श्रुति संत पुराना॥
हानि कि जग एहि सम कछु भाई। भजिय न रामहि नरतनु पाई॥
अघ कि बिना तामस कछु आना। धर्म कि दया सरिस हरिजाना॥
इहिबिधअमितयुगुतिमनगुनेऊं। मुनि उपदेश न सादर सुनेऊं॥

दो० पुरुष त्यागि सक नारि ही, जो बिरक्त मति धीर।
नतु कामी बिषया विवश, बिमुख जे पद रघुवीर॥

सो० सोउ मुनि ज्ञाननिधान, मृगनयनीबिधुमुखनिरखि।
बिकल होहि हरिजान, नारि विश्व माया प्रगट॥

मोह न नारि नारि के रूपा। पन्नगारि यह नीति अनूपा॥

राम भगति सोइ मुकुति गुसाँई। अनइच्छित आवैं बरिआई॥
अस हरि भगति सुगम सुखदाई। को अस मूढ़ न जाहि सुहाई॥
राम भगति चिंतामनि सुंदर। बसै गरुड़ जाके उर अंतर॥
परम प्रकाशरूप दिन राती। नहिं कछु चहिय दिया घृत बाती॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा। लोभवात नहिं ताहि बुझावा॥
प्रबल अविद्यातम मिटि जाई। हारहिं सकल सलभ समुदाई॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं। बसै भगति जाके उर माहीं॥
गरल सुधा सम अरि हित होई। तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई॥
व्यापहिं मानस रोग न भारी। जेहि के वश सब जीव दुखारी॥
राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेश न सपनहुँ ताके॥
चतुर शिरोमनि ते जगु माहीं। जो मनि लागि सुयतन कराहीं॥
सो मनि यदपि प्रगट जग अहई। राम कृपा बिनु नहिं कोउ लहई॥
सुगम उपाय पाइबे केरे। नर हतभाग देत भटभेरे॥
पावन पर्वत बेद पुराना। राम कथा रुचिराकर नाना॥
मरमी सज्जन सुमति कुदारी। ज्ञान बिराग नयन उरगारी॥
भाव सहित खोजैं जेइ प्रानी। पाव भगति मनि सब सुखखानी॥
मोरे मन प्रभु अस विश्वासा। रामतें अधिक रामके दासा॥
राम सिंधु घन सज्जन धीरा। चंदन तरु हरि संत समीरा॥
सबकर फल हरि भगति सुहाई। सो बिनु संत न काहु पाई॥
अस बिचारि जेइ कर सतसंगा। राम भगति तेहि सुलभ बिहंगा॥

दो० ब्रह्म पयोनिधि मंदर, ज्ञान संत सुर आहि।
कथा सुधा मथि काढ़हिं, भगति मधुरता जाहि॥
बिरति चर्म असि ज्ञान मद, लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइय सो हरिभगति, देखु खगेश बिचारि॥

नरतनु सम नहिं कवनिउ देही । जीव चराचर जाचत जेही ॥
नरक स्वर्ग अपवर्ग निसेनी । ज्ञान विराग भगति सुख देनी॥
सो तनु धरि हरि भजहि न जे नर । होय विषय रत मन्द मंदतर ॥
काँच किरच वदले ते लेहीं । करते डारि परसमनि देहीं ॥
नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं । संत मिलन सम सुख कछु नाहीं॥
परउपकार वचन मन काया । संत सहज सुभाव खगराया ॥
संत सहहिं दुख परहित लागी । परदुखहेतु असंत अभागी ॥
भूरजतरुसम संत कृपाला । परहित सहनित विपति विशाला ॥
खल विनु स्वारथ पर अपकारी । अहि मूषक इव सुनु उरगारी ॥
पर संपदा विनाशि नशाहीं । जिमि शशि हति हिम उपल विलाहीं ॥
परमधर्म श्रुति विदित अहिंसा । परनिंदासम अघ न गरीसा ॥
हरि गुरु निंदक दादुर होई । जन्म सहस्र पाव तनु सोई ॥
द्विजनिंदक बहु नरक भोग करि । जग जन्मै वायस शरीर धरि ॥
सुरश्रुति निंदक जे अभिमानी । रौरव नरक परहिं ते प्रानी ॥
होहिं उलूक संत निंदारत । मोहनिशा प्रिय ज्ञान भानुगत ॥
सव की निंदा जे जड़ करहीं । ते चमगादुर ह्वइ अवतरहीं ॥
रघुपति भक्ति सजीवन सूरी । अनोपान सरधा अति रूरी ॥
विमल ज्ञान जल जब सुनहाई । तब रहु राम भगति उर छाई ॥
श्रुति पुराण संदग्रन्थ कहाहीं । रघुपति भगति बिना सुख नाहीं ॥
हिमतें अनल प्रगट वरु होई । राम विमुख सुख पाव न कोई ॥

दो० वारि मथे घृत होइ बरु, सिकतातें बरु तेल ।
बिनु हरिभजन न भव तरिय, यह सिद्धांत अपेल ॥
मशकहिं करैं विरंचि प्रभु, अजहिं मशकतें हीन ।
अस विचारि तजि संशय, राम भजहिं प्रवीन ॥

तासु चरण शिर नाइ करि, प्रेमसहित मतिधीर ।
गएउ गरुड़ बैकुंठ तब, हृदय राखि रघुबीर ॥
गिरजा संत समागम, समन लाभ कछु आन ।
बिनु हरि कृपा न होइ सो, गावहिं बेद पुरान ॥

कहेउँ परम पुनीत इतिहासा । सुनत श्रवण छूटहि भव पासा ॥
प्रणत कल्पतरु करुणा पुंजा । उपजै प्रीति राम पदकंजा ॥
मन क्रम बचन जनति अघ जाई । सुनै जो कथा श्रवन मनलाई ॥
तीर्थाटन साधन समुदाई । योग बिराग ज्ञान निपुनाई ॥
नाना करम धरम ब्रत दाना । संयम दम जप तप मख नाना ॥
भूत दया द्विज गुरु सेवकाई । बिद्या बिनय बिबेक बड़ाई ॥
जह लगि साधन बेद बखानी । सब कर फल हरिभगत भवानी ॥
सोइ रघुनाथ भक्ति श्रुति गाई । राम कृपा काहू एक पाई ॥
सोइ सर्वज्ञ गुनी सोइ ज्ञाता । सोइ महि मंडित पंडित दाता ॥
धर्मपरायण सोइ कुलत्राता । रामचरण जाकर मन राता ॥
नीति निपुण सोइ परम सयाना । श्रुति सिद्धांत नीक तेहि जाना ॥
सो कबि कोबिद सो रणधीरा । जो छल छाड़ि भजै रघुबीरा ॥

दो० सो कुल धन्य उमा सुनु, जगत पूज्य सुपुनीत ।
श्री रघुबीर परायण, जेहि नर उपज बिनीत ॥
रामचरण रति जो चहै, अथवा पद निर्बान ।
भावसहित सो यह कथा, करै श्रवणपुट पान ॥

मन कामना सिद्ध नर पावै । जो यह कथा कपट तजि गावै ॥
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं । ते गोपद इव भवनिधि तरहीं ॥
एहि कलि काल न साधन दूजा । योग यज्ञ जप तप ब्रत पूजा ॥
रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं । संतत सुनिय राम गुनग्रामहिं ॥

चतुर्थ अध्याय ।

श्रीरामायण के नवाह पाठ करने की रीति तथा अपने मनोवाञ्छित फल प्राप्त करनार्थ अत्यन्त उपयोगी संग्रह ।

दिन	इस चौपाई से	इस चौपाई तक
१	आदि से लेकर	"हिय हर्ष कामारि तब, शंकर सहज सुजान बहुविधिउमहिं प्रशंसिपुनि, बोले कृपानिधान"
२	"सुनु सुभ कथा भवान" इस सोरठ से	सतानंद पद वन्दि प्रभु, बैठे गुरु पहँ जाय चलहु तात मुनि कहेउ तब, पठवा जनक बुलाय
३	चौ० "सीय स्वयम्बर देखिय जाई"	कीन्ह शौच सब सहजसुचि, सरितपुनीत नहाइ प्रातक्रिया करि तात पहँ, आये चारिउ भाइ
४	चौ० "भूप विलोकि लिये उरलाई"	श्यामल गौर किशोरवर, सुन्दर सुखमा ऐन शरद शर्वरीनाथ मुख, शरद सरोरुह नैन
५	चौ० "कोटि मनोज लजावन हारे"	राम शैल शोभा निरखि, भरत हृदय अति प्रेम तापस तप फल पाय जिमि, सुखी सिराने नेम
६	चौ० "तब केवट ऊँचे चढ़ि जाई"	जेहि विधि कपट कुरंग संग, धाय चले श्रीराम सो छवि सीता राखि उर, रटति रहति हरिनाम
७	चौ० "रघुपति अनुजहि आवत देखी"	पूरब दिशा विलोकि प्रभु, देखा उदित मयंक कह्योसबहिदेखहुशशिहि, मृगपतिसरिसअशंक
८	पूरब दिश गिर गुहा निवासी परम प्रताप तेज बलरासी	तब मुनि कहेउ सुमन्त्रसन, तुरत चले शिरनाइ रथ अनेक गज वाजि बहु, सकल संवारे जाय
९	जहं तहं धावन पठइ पुनि मंगल द्रव्य मँगाइ	"उत्तर काण्ड के अन्त तक"

अथ नवाह विधि ।

पंचमेवा नैवेद श्रीमहावीरजी, (श्रीशिवजी;) श्रीवाल्मीकजी श्रीतुलसीदासजी का आवाहन वो पूजा करके श्रीराम जानकी चारो भाई का षोडशोपचार पूजा करै ॥ रामायण का पाठ शुरूअ करने के पहिले १०८ मरतबे पाठ के आदि व अंत विश्राम में षडक्षर मन्त्र का जप करै और अष्टगंध का होम करे ।

(सामग्री होम)

(अगर १, तगर २, गूगुल ३, जटामासी ४, रक्तचन्दन ५, सपेद चन्दन ६, जव ७, तिल ८, शक्कर ६)

आखिर दिवस को जव, तिल, शक्कर इत्यादि मिलाकर सवा सेर से आम की लकड़ी में राम षडक्षर मन्त्र से १००० आहुति देना चाहिये चौथाई मार्जन करना ब्राह्मणभोजन यथाशक्ति कराना चाहिये हर रोज़ शाम को एक बार भोजन करना चाहिये।

फलाहार, या खीर या सेंधा निमक दिया हुआ चने की दाल और अरवा चावल का भात और ज़मीन पर सोवै ॥

कलियुग धर्म।

दो० कलिमल ग्रसे धरम सब, लुपुत भये सद्ग्रन्थ।
दंभिन निजमति कल्पि करि, प्रगट किए बहु पंथ ॥
भये लोक सब मोह वश, लोभ ग्रसे शुभ कर्म।
सुनु हरिजान ज्ञान निधि, कहौं कछुक कलिधर्म ॥

बरण धरम नहिं आश्रम चारी। श्रुति विरोध व्रत रत नर नारी॥
द्विज श्रुति वंचक भूप प्रजासन। कोउनहिंमाननिगमअनुशासन॥
मारग सोइ जाकंह जो भावा। पंडित सोइ जो गाल बजावा॥
मिथ्या रंभ दंभ रत जोई। ताकहुं संत कहै सब कोई॥
सोइ सयान जो परधन हारी। जो कर दंभ सो बड़ आचारी॥
जो कह झूठ मसखरी जाना। कलियुग सोइ गुणवन्त बखाना॥
निराचार जो श्रुति पथ त्यागी। कलियुग सोइ ज्ञानी वैरागी॥
जाके नख अरु जटा विशाला। सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला॥

दो० अशुभ वेष भूषन धरे, भक्ष्याभक्ष्य जे खांहि।
ते जोगी ते सिद्ध नर, पूजित कलियुग मांहि ॥
सो० जे अपकारी चार, तिनकर गौरव मान्यता।
मन क्रम वचन लवार, ते बकता कलिकाल मंहु ॥
नारि विवश नर सकल गोसाईं। नाचहिं नट मरकट की नाईं ॥
शूद्र द्विजन्ह उपदेशहिं ज्ञाना। मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना ॥
सब नर काम लोभ रत क्रोधी। देव विप्र गुरु संत विरोधी ॥
गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहिं नारि पर पुरुष अभागी ॥
सौभागिनी बिभूषन हीना। बिधवन्ह के सिंगार नवीना ॥
गुरु शिख बधिर अंध के लेखा। एक न सुनै एक नहिं देखा ॥
हरै शिष्य धन सोक न हरई। सो गुरु घोर नरक महं परई ॥
मात पिता बालकन बुलावहिं। उदर भरे सोइ धरम सिखावहिं ॥
दो० ब्रह्मज्ञान बिनु नारि नर, करहिं न दूसर बात।
कौड़ी लागी लोभ वश, करहिं विप्र गुरु घात ॥
वादहिं शूद्र द्विजन्ह सन, हम तुम्ह ते कछु घाटि।
जानहिं ब्रह्म सो विप्रवर, आंखि दिखावहिं डाटि ॥
परतिय लम्पट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने ॥
ते अभेद वादी ज्ञानी नर। देखा मैं चरित्र कलियुग कर ॥
आपु गए अरु तिन्हहु घालहिं। जे कछु सत मारग प्रतिपालहिं ॥
कलप कलप भर इकइक नरका। परहिं जे दूषहिं श्रुति करि तरका ॥
जे वरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा ॥
नारि मुई गृह संपति नासी। मूंड मुड़ाइ होहिं संन्यासी ॥
ते विप्रन्ह सन आपु पुजावहिं। उभय लोक निज हाथ नसावहिं ॥

विप्र निरच्छर लोलुप कामी । निराचार शठ वृषली स्वामी ॥
शूद्र करहि जप तप व्रत दाना । बैठि बरासन कहहिं पुराना ॥
सब नर कलपित करहिं अचारा । जाइ न बरनि अनीति अपारा॥

दो० भये बरन संकर कली, भिन्न सेतु सब लोग ।
करहिं पाप पावहिं दुखहिं, भय रुजसोक वियोग ॥
श्रुति संमत हरि भगति पथ, संयुत विरति विवेक ।
ते न चलहिं नर मोह वश, कलपहिं पंथ अनेक ॥

छन्द ॥

बहु दाम संवारहिं धाम जती । विषया हरि लीन्हि रही विरती॥
तपसी धनवन्त दरिद्र गृही । कलि कौतुक तात न जात कही ॥
कुलवंति निकारहिं नारि सती । गृह आनहिं चेरिनिवेरि गती ॥
सुत मानहिं मातु पिता तबलौं । अबलानन दीख नहीं जबलौं ॥
ससुरारि पियारि लगी जबते । रिपुरूप कुटुंब भए तबते ॥
नृप पाप परायन धर्म नहीं । करि दंड विदंड प्रजा नितहीं ॥
धनवंत कुलीन मलीन अपी । द्विज चिह्न जनेउ उघार तपी ॥
नहिं मान पुरानन वेदहिं जो । हरि सेवक संत सही कलि सो ॥
कवि वृंद उदार दुनी न सुनी । गुन दूषक बात न कोपि गुनी ॥
कलि बारहि बार दुकाल परैं । बिनु अन्न दुखी बहु लोग मरैं॥

दो० सुनु खगेश कलि कपट हट, दंभ द्वेष पाखंड ।
मान मोह मारादि सब, व्यापि रहेउ ब्रह्मंड ॥
तामस धरमहिं करिहिंनर, जप तप व्रत मख दान ।
देव न बरषहिं धरनि पर, बए न जामहिं धान ॥

छन्द ॥

अबला कच भूषन भूरि छुधा। धनहीन दुखी ममता बहुधा ॥
सुख चाहहिं मूढ़ न धर्म रता। मत थोरि कठोरि न कोमलता ॥
नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान विरोध अकारनहीं ॥
लघु जीवन सम्वत पंचदसा। कल्पान्त न नाश गुमान असा ॥
कलिकाल विहाल किए मनुजा। नहिं मानत कौ अनुजा तनुजा ॥
नहिं तोष विचार न शीतलता। सब जाति कुजाति भए मंगता ॥
इरिषा परुषा क्षर लोलुपता। भरिपूरि रही समता विगता ॥
सब लोग विशोक वियोग हुए। बरनाश्रम धर्म विचार गए ॥
दम दान दया नहिं जानपनी। जड़ता पर वंचनताति घनी ॥
तन पोषक नारि नरा सगरे। परनिंदक जे जग में बगरे ॥

दो० सुनु व्यालारि कराल कलि, मल अवगुन आगार।
गुनो बहुत कलियुगहुं कर, बिनु प्रयास निस्तार ॥
कृतयुग त्रेता द्वापरहु, पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलि हरि, नामते पावहिं लोग ॥

कृतयुग सब जोगी विज्ञानी। करि हरिध्यान तरहिं भव प्रानी ॥
त्रेता विविध यज्ञ नर करहीं। प्रभुहिं समर्पि कर्म भव तरहीं ॥
द्वापर करि रघुपति पद पूजा। नर भव तरहिं उपाय न दूजा ॥
कलियुग केवल हरिगुन गाहा। गावत नर पावहि भव थाहा ॥
कलियुग योग यज्ञ नहिं ज्ञाना। एक अधार राम गुन गाना ॥
सब भरोस तजि जो भजु रामहिं। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहिं ॥
सो भव तर कछु संशय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं ॥
कलिकर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होहिं नहिं पापा ॥

दो० कलियुग सम युग आन नहिं, जौं नर करु विश्वास।
गाइ राम गन गुन विमल, भवतर बिनहि प्रयास॥
प्रगट चारि पद धरम के, कलिमहुँ एकप्रधान।
जेन केन विधि दीन्हेउ, दान करै कल्यान॥

कृतयुग धरम होहिं सब केरे। हृदय राम माया के प्रेरे॥
शुद्ध सत्त्व समता विज्ञाना। कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना॥
सत्त्व बहुत रज कछु रति करमा। सब विधि सुख त्रेता कर धरमा॥
बहु रज स्वल्प सत्य कछु तामस। द्वापर धरम हरष भय मानस॥
तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलिप्रभाव बिरोध चहुं ओरा॥
बुध जुग धरम जानि मन माहीं। तजि अधरम रति धर्म कराहीं॥
काल कर्म नहिं ब्यापहिं ताही। रघुपति चरन प्रीति अति जाही॥
नटकृत विकट कपट खगराया। नट सेवकहि न ब्यापै माया॥

दो० हरिमाया कृत दोष गुन, बिनु हरिभजन न जाहिं।
भजियराम तजि काम सब, अस विचारि मन माहिं॥

माया का परवार।

नारद भव विरंचि सनकादी। जे मुनि नायक आतम वादी॥
मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही॥
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा। केहि के हृदय क्रोध नहिं दाहा॥

दो० ज्ञानी तापस शूर कवि, कोविद गुन आगार।
केहि के लोभ विडंबना, कीन्हि न एहि संसार॥
श्रीमद वक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगनयनी के नयनशर, को अस लागु न जाहि॥

गुनकृत सन्निपात नहिं केही । कोउ न मान मद तेजि निवेही ॥
जोवन ज्वर केहि नहिं बलकावा । ममता केहि कर यश न नशावा ॥
मत्सर काहिं कलंक न लावा । काहि न शोक समीर डोलावा ॥
चिंता सांपिनि केहि नहिं खाया । को जग जाहि न व्यापी माया ॥
कीट मनोरथ दारु शरीरा । जेहि न लाग घुन को अस धीरा ॥
सुत वित नारि ईखना तीनी । केहि के मति इन्ह कृत न मलीनी ॥
यह सब माया कर परिवारा । प्रबल अमित को बरनै पारा ॥
शिव चतुरानन जाहि डेराहीं । अपर जीव केहि लेखे मांही ॥
दो० व्यापि रहे संसार महुँ, माया कटकु प्रचंड ।
सेनापति कामादि भट, दंभ कपट पाखंड ॥
सो दासी रघुवीर कै, समुझे मिथ्या सोपि ।
छुट न राम कृपा बिनु, नाथ कहौं पद रोपि ॥
जो माया सब जगहिं नचावा । जासु चरित लखि काहु न पावा ॥
सोइ प्रभु भ्रूविलास खगराजा । नाच नटी इव सहित समाजा ॥

निम्न लिखित पद पाठ मंगलदायक है ।

दो० नारि कुमिदिनी अवधसर, रघुपति विरह दिनेश ।
अस्त भए विकसत भई, निरखि राम राकेश ॥
होहिं सगुन शुभ विविधि विधि, बाजहिं नाक निशान।
पुर नर नारि सनाथ करि, भवन चले भगवान ॥
प्रभु जानी कैकई लजानी । प्रथम तासु गृह गए भवानी ॥
ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा । पुनि निज भवन गवन हरि कीन्हा ॥
कृपासिन्धु जब मंदिर गयऊ । पुर नर नारि सुखी सब भयऊ ॥
गुरु वसिष्ठ द्विज लिए बुलाई । आजु सुघरी सुदिन शुभदाई ॥

बस द्विज देहु हरषि अनुशासन। रामचन्द्र बैठहिं सिंहासन॥
मुनि बसिष्ठ के बचन सुहाए। सुनत सकल विप्रन्हं अतिभाए॥
कहहि बचन मृदु विप्र अनेका। जग अभिराम राम अभिषेका॥
अब मुनिवर विलंब नहिं कीजे। महाराज कहुँ तिलक करीजे॥

दो० तब मुनि कहेउ सुमंत्र सन, सुनत चलेउ शिरु नाइ।
रथ अनेक बहु बाजि गज, तुरत सवाँरे जाइ॥
जहँ तहँ धावन पठइ पुनि, मंगल द्रव्य मँगाइ।
हरष समेत बसिष्ठ पद, पुनि शिरु नायउ आइ॥

अवधपुरी अति रुचिर बनाई। देवन्ह सुमन वृष्टि झरि लाई॥
राम कहा सेवकन्ह बुलाई। प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जाई॥
सुनत बचन जहँ तहँ जन धाए। सुग्रीवादि तुरत अन्हवाए॥
पुनि करुनानिधि भरत हँकारे। निजकर जटा राम निरुआरे॥
अन्हवाए प्रभु तीनिउँ भाई। भगतबछल कृपाल रघुराई॥
भरत भाग प्रभु कोमलताई। शेष कोटि शत सकहिं न गाई॥
पुनि निज जटा राम बिवराए। गुरु अनुशासन माँगि नहाए॥
करि मज्जन प्रभु भूषन साजे। अंग अनंग कोटि छवि लाजे॥

दो० सासुन्ह सादर जानकी, मज्जनु तुरत कराइ।
दिव्य वसन वर भूषणहि, अंग अंग सजे बनाइ॥
राम बाम दिशा शोभित, रमा रूप गुण खानि।
देखि सासु सब हरषी, जन्म सुफल निज जानि॥
सुनु खगेस तेहि अवसर, ब्रह्मा शिव मुनिबृंद।
चढ़ि विमान आए सकल, सुर देखन सुखकंद॥

प्रभु विलोकि मुनिमन अनुरागा। तुरतहिं दिव्य सिंहासन माँगा॥

रवि सम तेज सो बरनि न जाई। बैठे राम द्विजन्ह शिरुनाई ॥
जनकसुता समेत रघुराई। पेखि प्रहरषे मुनि समुदाई ॥
वेद मंत्र तब द्विजन उचारे। नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे ॥
प्रथम तिलक वसिष्ठ मुनि कीन्हा। पुनि सब विप्रन्ह आयसु दीन्हा ॥
सुत विलोकि हरषी महतारी। बार बार आरती उतारी ॥
विप्रन्ह दान विविधि विधि दीन्हे। जाचक सकल अजाचक कीन्हे ॥
सिंहासन पर त्रिभुवन सांई। देखि सुरन्ह दुन्दुभी बजाई ॥

छन्द ॥

नभ दुन्दुभी बाजहिं विपुल गंधर्व किन्नर गावहीं।
नाचहि अपछरा वृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं ॥
भरतादि अनुज विभीषनांगद हनुमदादि समेत ते।
गहि छत्र चामर व्यजन धनु असि चर्म शक्ति विराजते ॥
श्री सहित दिनकर वंशभूषन काम बहु छबि शोभई।
नव अम्बुधर वर गात अम्बर पीत मुनि मन मोहई ॥
मुकुटांगदादि विचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे।
अंभोजनयन विशाल उर भुज धन्य नर निरखंति जे ॥

दो० वह शोभा समाज सुख, कहतु न बनै खगेश।
बरनै शारद शेष श्रुति, सो रस जान महेश ॥
भिन्न भिन्न अस्तुति करि, गे सुर निज निज धाम।
वंदि वेष धरि वेद तब, आए जहँ श्रीराम ॥
प्रभु सर्वज्ञ कीन्ह अति, आदर कृपानिधान।
लखे न काहू मरम कछु, लगे करन गुन गान ॥

अथ वेदस्तुतिप्रारम्भः।

अथ सामवेदोक्त ।

छन्द ॥

जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूपशिरोमने।
दशकंधरादि प्रचंड निशिचर प्रबल खल भुजबल हने॥
अवतार नर संसार भार विभंजि दारुन दुख दहे।
जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संयुक्त शक्ति नमामहे॥

अथ ऋग्वेदोक्त ।

तव विषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे।
भवपंथभ्रमत अमितदिवस निशि काल कर्मगुननिभरे॥
जे नाथ करि करुना विलोके त्रिविधि दुख ते निर्वहे।
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रक्ष राम नमामहे॥

अथ यजुर्वेदोक्त ।

जे ज्ञानमान विमत्त तव भव हरनि भगति न आदरी।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी॥
विश्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भवनाथ सो स्मरामहे॥

अथ अथर्वणवेदोक्त ।

जे चरन शिव अज पूज्य रज शुभ परसि मुनिपतनी तरी।
नख निर्गता मुनि वंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी॥
ध्वज कुलिश अंकुश कंजयुत वन फिरत कंटक किन लहे।
पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामिहे॥

अथ सर्व वेदोक्त ।

अव्यक्त मूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने ।
षट कंध शाखा पंच बीश अनेक परन सुमन घने ॥
फल जुगल विधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रितरहे ।
पल्लवत फूलत नवल नित संसारविटप नमामहे ॥
जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभव गम्य मन पर ध्यावहीं ।
ते कहहिं जानहिं नाथ हम तो सगुन जश नित गावहीं ॥
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह वर मागहीं ।
मन वचन कर्म विकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं ॥

दो० सबके देखत वेदन, विनती कीन्ह उदार ।
अन्तर्ध्यान भये तब, गए ब्रह्म आगार ॥
वैनतेय सुनु शंभु तब, आये जहं रघुवीर ।
विनय करत गद्गद्गिरा, पूरित पुलक शरीर ॥

छन्द ॥

जय राम रमारमनं समनं, भवताप भयाकुल पाहि जनं ॥
अवधेशु सुरेशु रमेश विभो, शरनागत मांगत पाहि प्रभो ॥
दशशीश विनाशन बीसभुजा, कृतिदूरि महामहिभूरिरुजा ॥
रजनीचर वृंद पतंग रहे, शर पावक तेज प्रचंड दहे ॥
महि मंडल मंडन चारुतरं, धृत शायक चाप निषंग वरं ॥
मद मोह महा ममता रजनी, तम पुंज दिवाकर तेजअनी ॥
मनुजात किरात निपात किये, मृगलोग कुभोग सरेन हिए ॥
हति नाथ अनाथनि पाहि हरे, विषयावन पांवर भूलिपरे ॥
बहु रोग वियोगन्हि लोग हये, भवदंघ्रि निरादरके फल ए ॥

भवसिंधु अगाध परे नरते, पद पंकज प्रेम न जे करते ॥
अति दीनमलीन दुखीनितहीं, जिन्हके पद पंकजप्रीतिनहीं॥
अवलंब भवंतकथाजिन्हके, प्रियसन्त अनन्तसदातिन्हके॥
नहि राग न लोभ न मान मदा, तिन्ह के सम वैभव वा विपदा॥
यहि ते तव सेवक होत मुदा, मुनि त्यागत जोग भरोस सदा ॥
करि प्रेम निरंतर नेम लिये, पद पंकज सेवत शुद्ध हिए॥
सममानि निरादर आदरहीं, सब संत सुखी विचरंत मही ॥
मुनि मानस पंकज भृंग भजे, रघुवीर महारनधीर अजे ॥
तव नाम जपामि नमामि हरी, भवरोग महामद मानअरी ॥
गुन शील कृपा परमायतनं, प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं ॥
रघुनंद निकंदन द्वन्द्वघनं, महिपाल विलोकय दीनजनं ॥

दो० बार बार वर मांगौं, हरषि देहु श्रीरंग ।
पद सरोज अनपायनी, भगति सदा सतसंग ॥
बरनि उमापति रामगुन, हरषि गए कैलाश ।
तब प्रभु कपिन्ह दिवाए, सब विधि सुखप्रद वास ॥

सुनु खगपति यह कथा पावनी । त्रिबिध ताप भव दाप दावनी ॥
महाराज कर शुभ अभिषेका । सुनत लहहिं नर विरति विवेका॥
जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं । सुख संपति नाना विधि पावहिं ॥
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं । अंतकाल रघुपति पुर जाहीं ॥
सुनहि विमुक्त बिरति अरु बिषई । लहहिं भक्ति गति संपति नितई ॥
खगपति राम कथा मैं बरनी । सुमति बिलास त्रास दुख हरनी॥
विरति विवेक भक्ति दृढ़ करनी । मोह नदी कह सुन्दर तरनी ॥
नित नव मंगल कौशलपुरी । हरषिति रहहिं लोग सब कुरी ॥

नित नव प्रीति रामपदपंकज । सबके जिन्हहिंनमतशिवमुनिअज॥
मंगल बहु प्रकार पहिराये । द्विजन दान नाना बिध पाये ॥
दो० ब्रह्मानंद मगन कपि, सबके प्रभुपद प्रीति ।
जात न जाने दिवस निशि, गए मासषट् बीति ॥

विघ्ननाश ।

सकल विघ्न व्यापे नहिं ताही । राम कृपा करि चितवहिं जाही ॥

विपद्‌नाश ।

राजिवनैन धरे धनु शायक । भक्त विपति भंजन सुखदायक ॥

विषनाश हेतु ।

नाम प्रताप जानु शिव नीके । कालकूट फल दीन अमीके ॥

सुखसम्पति ।

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं । सुख सम्पति नाना विधि पावहिं॥

दुष्ट से मिलाप ।

गरल सुधा रिपु करै मिताई । गोपद सिंधु अनल सितलाई ॥

रक्षा ।

मामभिरक्षय रघुकुल नायक । धृत वर चाप रुचिर कर शायक॥
मोरे हित हरि सम नहिं कोई । यहि अवसर सहाय सो होई ॥

मोहन ।

करतल बाण धनुष अति सोहा । देखि रूप सचराचर मोहा ॥

शत्रु के सन्मुख आने का ।

कर शारंग विशिख कटि भाथा । मृगपति ठवनि चले रघुनाथा ॥

अल्पमृत्युनिवारण।

दो० नाम पाहरू दिवस निशि, ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद यंत्रिका, प्राण जाहिं केहि बाट॥

तिजरा वग़ैरह बोख़ार छुड़ाने के लिए।

दो० कोटि पंचसत मर्कट, रहत सर्वदा साथ।
कालहुं ते रन में लड़हिं, कुमुद आदि कपिनाथ॥

खेदनिवारक।

जब से राम ब्याहि घर आये। नित नव मंगल मोद बधाये॥

सङ्कटनाशक।

जो प्रभु दीनदयाल कहावा। आरतिहरण वेद यश गावा॥
जपहिं नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी॥
दीनदयाल विरद सम्भारी। हरहु नाथ मम संकट भारी॥

यात्रा की सफलता के लिए।

प्रविशि नगर कीजे सब काजा। हृदय राखि कोशलपुरराजा॥

ग्रहादि अरिष्टनाशन प्रयोग।

नीचे लिखी जो चौपाई है उसकी दूसरी फाँकी से आरम्भ करके उत्तरकाण्ड तक समूचा पढ़के बालकाण्ड से पढ़ते २ इस चौपाई के पहिली फांकी तक समाप्त करे॥

मन्त्र महामणि विषय व्यालके"। मेटत कठिन कुअंक भालके॥

भक्ति प्राप्ति के लिए।

दो० भक्त कल्पतरु प्रणतहित, कृपासिन्धु सुखधाम।
सोइ निजभगतिमोहिप्रभु, देहु दया करि राम॥

परमपुरुष राजकिशोर किशोरी सहित दर्शन हित।

दो० नील सरोरुह नीलमणि, नील नीरधर श्याम।
लाजहिं तन शोभा निरखि, कोटि कोटि शत काम॥

इस दोहा से प्रारम्भ करे और उत्तरकाण्ड तक पढ़के बाल-काण्ड पढ़ते हुये इस चौपाई में समाप्त करे।

भगतबछल प्रभु कृपानिधाना। विश्ववास प्रगटे भगवाना॥

इम्तेहान पास होने के लिये।

नीचे लिखे चौपाई को भोर के वक़् क़बल किसी से बातचीत करने के अनगिनती पढ़े वो परमेश्वर से कहे कि मेरा इम्तेहान पास हो। वो डेरा से जब चलने लगे तो इस चौपाई को पढ़ते जाय तब इम्तेहान दे॥

जापर कृपा करहिं जन जानी। कवि उर अजिर नचावहिं वाणी॥
मोरे हित हरि सम नहिं कोई। यह अवसर सहाय सो होई॥
मोर सुधारहिं सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपा अघाती॥

अपने मनोरथ के अनुसार चौपाई वा दोहा वा छन्द वा सोरठा को ऊपर लिखी रीति अनुसार तथा भोर वा आधी रात या संध्या या दोपहर के समय अपना मनोरथ मन में रखके कुछ देर लो अनगिनती पढ़ता रहे श्रीहनुमत उमाशंकर कृपा से अवश्य मनोरथ सुफल होगा॥ इति श्री॥

विवाह के अर्थ प्रयोग।

इस छन्द से प्रारम्भ करे :—

तब जनक पाइ वशिष्ठ आयसु ब्याह साज सवाँरिके।

इत्यादि से आरम्भ करे और पूर्ववत् इस छन्द में समाप्त करे:—

भरि भुवन रहा उछाह राम विवाह भा सबहिं कहा ॥

सब कार्य मनोरथ सिद्ध प्रयोग।

दो० भव भेषज रघुनाथ यश, सुनहिं जे नर अरु नारि।
तिनके सकल मनोरथ, सिद्ध करहिं त्रिपुरारि ॥

घर से जो किसी कार्य के सिद्ध के लिये चले, तो इस दोहा को पढ़ते हुए उस स्थान तक जाय और मुकद्दमा के लिये चले तो गाय को गुड़ खिलाकर इसको पढ़ते हुए चले ॥

पवनतनय बल पवन समाना। बुधि विवेक विज्ञान निधाना ॥
कौन सुकाज कठिन जग माहीं। जो नहिं होय तात तुम पाहीं ॥

तब सुन्दरकाण्ड समाप्त तक पढ़के फिर यही तीन चौपाई पढ़कर विसर्जन करे तो जो जो कार्य मन में हों सिद्ध हों ॥

संशय निवृत्ति हेतु।

राम कथा सुन्दर करतारी। संशय विहंग उड़ावनहारी ॥

मङ्गल उत्सव के अर्थ।

सो० सिय रघुवीर विवाह, गावहिं सुनहिं जे नारि नर।
तिन कहँ सदा उछाह, मंगलायतन राम यश ॥

ज्ञान वैराग भक्ति के निमित्त।

सो० भरत चरित करि नेम, तुलसी जे सादर सुनहिं।
सीय राम पद प्रेम, अवशि होय भवरस-विरति ॥

बिन दुख मरने के हेतु।

दो० रामचरण दृढ़ प्रीति करि, बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमनमाल जिमि कंठ ते, गिरत न जानै नाग ॥

ज्ञान प्राप्ति के लिये।

क्षिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित यह अधम शरीरा॥

कठिन क्लेश नाश हेतु।

हरण कठिन कलि कलुष कलेशू। महा मोह निशि दलन दिनेशू॥

सब सुख प्राप्ति हेतु।

सुनहि विमुक्त विरत अरु विषई। लहहिं भक्ति सुख सम्पति नितई॥

किसी की किई हुई बुराई सुधर जाना।

राम कृपा अवरेव सुधारी। विबुध धारिमह गुनदगोहारी॥

विद्या प्राप्ति के लिये।

गुरु गृह गये पढ़न रघुराई। अल्पकाल विद्या सब पाई॥

भूतादि निवारण।

सो० वन्दौं पवनकुमार, खल वन पावक ज्ञानघन।
जासु हृदय आगार, बसहिं राम शर चाप धर॥

महामारी (प्लेग) में इसी चौपाई को सम्पुट करके सुन्दरकाण्ड नित्य पढ़ना, एवं नीचे लिखी चौपाई को बड़े आदर से और आरत होकर चित्त देके सुबह शाम पढ़ता यह ख्याल करके कि हमारे यहां कल्यान रहे और हम प्लेग महामारी के बखेड़ों से बचे रहें।

जय रघुवंश वनज वन भानू। गहन दनुज कुल दहन कृशानू॥
मंगल भवन अमंगलहारी। द्रवहु सो दशरथ अजिरविहारी॥
मामभिरक्षय रघुकुल नायक। धृत वर चाप रुचिर कर शायक॥

जीविका के लिये।

विश्वभरन पोखन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई॥

गई बहोरि गरीब निवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू॥

दारिद्र्यदमन सम्पुट।

अतिथि पूज्य प्रीतम पुरारि के। कामद घन दारिद दवारि के॥

नित्य २ उत्सव होने के लिये।

भुवन चार दस भरेउ उच्छाहू। जनकसुता रघुवीर विवाहू॥

आकर्षण प्रियतम।

जाकर जापर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलत न कछु सन्देहू॥

इसको बैठकर बराबर जपता रहे जब तक आवे, अथवा सम्पुट करके नवाह करे तो नावें दिन आवै।

उपद्रव नाश।

दैविक दैहिक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि व्यापा॥

अपराध क्षमा के लिये।

त्राहि क्षमामन्दिर दोउ भ्राता। पाहि पतितपावन जनत्राता॥

पुत्र के सुख के अर्थ प्रयोग।

दो० प्रेम मगन कौशल्या, निशि दिन जात न जान।
सुत सनेहवस माता, बालचरित कर गान॥

इहां से आरम्भ करे वो इसके पहिले चौपाई में समाप्त करे ऊपर कहे विधि अनुसार समाप्ति की चौपाई यह है—

लै उछंग कबहूं हलरावे। कबहु पालने घालि झुलावे॥

पराभक्ति वशीकरण प्रयोग।

धरि धीरज एक अली सयानी। सीता सन बोली गहि पानी॥

इहां से आरम्भ करे और पढ़ते २ पूर्ववत् इसके पहिले दोहा में समाप्त करे।

दो० केहरि करि पट पीतधर, सुखमा शीलनिधान।
देखि भानुकुलभूषणहिं, बिसरी सखिन अपान॥

शुद्ध बुद्धि प्राप्ति करन हेतु।

जनकसुता जगजननि जानकी। अतिशय प्रिय करुणानिधानकी॥
ताके युग पद कमल मनाऊं। जासु कृपा निर्मल मति पाऊं॥

इन चौपाइयों को प्रातःकाल और सायंकाल सहज शुद्ध होकर एक माला जाप करने से आश्चर्यजनक फल होता है परीक्षित है॥

नजर टोना कुदृष्टि निवारण हेतु।

निम्न लिखित चौपाई को यदि कोई माता अपने बाल बालिकाओं को पढ़कर झार दिया करै तो नजर टोनादि न लगै॥ यदि इसी चौपाई को २१ बार पढ़कर प्रति बार तृण तोरता जाय और झारता जाय तो बालक के नजर टोनादि मिटि जाय॥

श्याम गौर सुन्दर दोउ जोरी। निरखहिं छवि जननी तृण तोरी॥

मुख़तारकारी और वकालत के इम्तिहान पास करने के हेतु श्रीलखनलाल और श्रीपरसरामजी का सम्वाद पाठ करै॥

इति॥

पांचवां अध्याय ।

परशुराम लक्ष्मण संवाद ।

तेहि अवसर सुनि शिव धनु भंगा । आये भृगुकुल कमल पतंगा ॥
देखि महीप सकल सकुचाने । बाज झपट जनु लवा लुकाने ॥
गोर शरीर भूति भलि भ्राजा । भाल विशाल त्रिपुंड विराजा ॥
शीश जटा शशि वदन सुहावा । रिस वश कछुक अरुन होइ आवा ॥
भृकुटी कुटिल नयन रिसराते । सहजहिं चितवत मनहुँ रिसाते ॥
वृषभ कन्ध उर बाहु बिशाला । चारु जनेउ माल मृगछाला ॥
कटि मुनि वसन तून दुइ बाँधे । धनु शर कर कुठार कल काँधे ॥

दो० शान्त वेष करनी कठिन, बरनि न जाइ स्वरूप ।
धरि मुनितनु जनु वीररस, आये जहँ सब भूप ॥

देखत भृगुपति वेष कराला । उठे सकल भय विकल भुआला ॥
पितु समेत कहि कहि निजनामा । लगे करन सब दंडप्रनामा ।
जेहि स्वभाव चितवहिं हितजानी । सो जानै जनु आयु खुटानी ॥
जनक बहोरि आइ शिर नावा । सीय बुलाय प्रणाम करावा ॥
आशिष दीन्ह सखी हरषानी । निज समाज लै गईं सयानी ॥
विश्वामित्र मिले पुनि आई । पद सरोज मेले दोउ भाई ॥
राम लषन दशरथ के ढोटा । दीन्ह अशीष जानि भल जोटा ॥
रामहिं चितय रहे थकि लोचन । रूप अपार मार मद मोचन ॥

दो० बहुरि बिलोकि विदेहसन, कहहु कहा अतिभीर ।
पूछत जान अजान जिमि, व्यापेउ कोप शरीर ॥

समाचार कहि जनक सुनाये । जेहि कारन महीप सब आये ॥
सुनत वचन फिर अनत निहारे । देखे चाप खंड महि डारे ॥

अति रिसि बोले वचन कठोरा। कहु जड़ जनक धनुष केइँ तोरा॥
वेगि दिखाव मूढ़ नतु आजू। उलटौं महि जहँ लगि तव राजू॥
अति डर उतर देत नृप नाहीं। कुटिल भूप हरषे मन माहीं॥
सुर मुनि नाग नगर नर नारी। सोचहिं सकल त्रास उर भारी॥
मन पछितात सीय महतारी। विधि अब सवँरी बात विगारी॥
भृगुपति कर स्वभाव सुनि सीता। अर्ध निमेष कल्प सम वीता॥

दो० सभय विलोके लोग सब, जानि जानकिहि भीरु।
हृदय न हरष विषाद कछु, बोले श्री रघुवीरु॥

नाथ शम्भु धनु भञ्जनहारा। होइह कोउ यक दास तुम्हारा॥
आयसु कहा कहिय किन मोही। सुनि रिसाय बोले मुनि कोही॥
सेवक सोइ जो करै सेवकाई। अरि करणी करि करिय लराई॥
सुनहु राम जेहि शिव धनु तोरा। सहसबाहु सम सो रिपु मोरा॥
सो विलगाइ बिहाइ समाजा। नत मारे जैहहिं सब राजा॥
सुनि मुनि वचन लषन मुसुकाने। बोले परशुधरहि अपमाने॥
बहु धनहीं तोरीं लरिकाई। कबहुँ न अस रिसि कीन्ह गोसाईं॥
यहि धनु पर ममता केहि हेतू। सुनि रिसाय कह भृगुकुलकेतू॥

दो० रे नृप बालक काल वश, बोलत तोहिं न सँभार।
धनही सम त्रिपुरारि धनु, विदित सकल संसार॥

लषन कहा हँसि हमरे जाना। सुनहु देव सब धनुष समाना॥
का क्षति लाभ जीर्ण धनु तोरे। देखा राम नये के भोरे॥
छुवत टूट रघुपतिहिं न दोषू। मुनि बिनु काज करिय कत रोषू॥
बोले चितय परशु की ओरा। रे शठ सुनेसि स्वभाव न मोरा॥
बालक जानि बधौं नहिं तोहीं। केवल मुनि करि जानेसि मोहीं॥

बाल ब्रह्मचारी अति कोही। विश्व विदित क्षत्रिय कुल द्रोही॥
भुजबल भूमि भूप बिनु कीन्ही। विपुल बार महिदेवन दीन्ही॥
सहसबाहु भुज छेदनहारा। परशु विलोकु महीपकुमारा॥

दो० मातु पितहि जनि सोचबस, करसि महीपकिशोर।
गर्भन के अर्भक दलन, परशु मोर अतिघोर॥

बिहँसि लषन बोले मृदुबानी। अहो मुनीश महाभट मानी॥
पुनि पुनि मोहिं देखाव कुठारा। चहत उड़ावन फूँकि पहारा॥
इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं। जो तरजनी देखि मरि जाहीं॥
देखि कुठार शरासन बाना। मैं कछु कहा सहित अभिमाना॥
भृगुकुल समुझि जनेउ विलोकी। जो कछु कहौ सहौं रिस रोकी॥
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई। हमरे कुल इन पर न सुराई॥
बधे पाप अपकीरति हारे। मारतहूँ पाँपरिय तुम्हारे॥
कोटि कुलिश सम वचन तुम्हारा। वृथा धरहु धनु बान कुठारा॥

दो० जो विलोकि अनुचित कहेउँ, क्षमहु महामुनि धीर।
सुनि सरोष भृगुवंशमनि, बोले गिरा गँभीर॥

कौशिक सुनहु मन्द यह बालकु। कुटिल कालवश निज कुल घालकु॥
भानुवंश राकेश कलंकू। निपट निरंकुश अबुध अशंकू॥
काल कवलु होइहि छन माहीं। कहौं पुकारि खोरि मोहिं नाहीं॥
तुम हटकहु जो चहहु उबारा। कहि प्रतापु बल रोषु हमारा॥
लषन कहेउ मुनि सुजश तुम्हारा। तुमहिं अछत को बरनै पारा॥
अपने मुख तुम आपनि करनी। बार अनेक भाँति बहु बरनी॥
नहिं संतोष तो पुनि कछु कहहू। जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू॥
वीर वरति तुम धीर अछोभा। गारी देत न पावहु सोभा॥

दो० शूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु।
विद्यमान रन पाइ रिपु, कायर कथहिं प्रलापु॥

तुम तौ काल हाँकि जनु लावा। बार बार मोहिं लागि बुलावा॥
सुनत लषन के वचन कठोरा। परशु सुधारि धरे कर घोरा॥
अब जनि देहु दोष मोहिं लोगू। कटुवादी बालक वध जोगू॥
वाल विलोकि बहुत मैं बाँचा। अब यह मरनहार भा साँचा॥
कौशिक कहा क्षमिय अपराधू। बाल दोष गुन गनहिं न साधू॥
कर कुठार मैं अकरुन कोही। आगे अपराधी गुरु द्रोही॥
उतर देत छाँड़ों बिनु मारे। केवल कौशिक शील तुम्हारे॥
नतु यहि काटि कुठार कठोरे। गुरुहिं उऋन होतेउँ श्रम थोरे॥

दो० गाधिसुवन कह हृदय हँसि, मुनिहिं हरिअरे सूझ।
अजगव खाँडन ऊख मय, अजहुँ न बूझ अबूझ॥

कह्यौ लषन मुनि शील तुम्हारा। को नहिं जान बिदित संसारा॥
मातहिं पितहिं उऋन भये नीके। गुरु ऋन रहा शोच बड़ जीके॥
सो जनु हमरे माथे काढ़ा। दिन चलि गयउ ब्याज बहु बाढ़ा॥
अब आनिय ब्यवहरिया बोली। तुरत देउँ मैं थैली खोली॥
सुनि कटु बचन कुठार सुधारा। हाय हाय सब सभा पुकारा॥
भृगुवर परशु देखावहु मोहीं। विप्र विचारि बचौ नृप द्रोही॥
मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े। द्विज देवता घरहीं के बाढ़े॥
अनुचित कहि सब लोग पुकारे। रघुपति सैनहिं लषन निवारे॥

दो० लषन उतर आहुति सरिस, भृगुवर कोप कृशानु।
बढ़त देखि जल सम वचन, बोले रघुकुल भानु॥

नाथ करहु बालक पर छोहू। सुद्ध दूध मुख करिय न कोहू॥

जो पै प्रभु प्रभाव कछु जाना। तौ कि बराबरि करत अयाना॥
जो लरिका कछु अनुचित करहीं। गुरु पितु मातु मोद मन भरहीं॥
करिय कृपा शिशु सेवक जानी। तुम सम शील धीर मुनि ज्ञानी॥
राम बचन सुनि कछुक जुड़ाने। कहि कछु लषन बहुरि मुसकाने॥
हँसत देखि नखशिख रिस व्यापी। राम तोर भ्राता बड़ पापी॥
गौर शरीर श्याम मन माहीं। कालकूट मुख पय मुख नाहीं॥
सहज टेढ़ अनुहरै न तोहीं। नीच मीच सम देख न मोहीं॥

दो० लषन कहेउ हँसि सुनहु मुनि, क्रोध पाप कर मूल।
जेहि वश जन अनुचित करहिं, चरहिं विश्व प्रतिकूल॥

मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया। परिहरि कोप करिय अब दाया॥
टूट चाप नहिं जुरहि रिसाने। बैठिय होइहि पाँय पिराने॥
जो अति प्रिय तौ करिय उपाई। जोरिय कोउ बड़ गुनी बुलाई॥
बोलत लषनहिं जनक डराहीं। मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं॥
थर थर कांपहिं पुर नर नारी। छोट कुमार खोट अति भारी॥
भृगुपति सुनि सुनि निरभय बानी। रिस तनु जरै होय बल हानी॥
बोले रामहिं देइ निहोरा। बचै बिचारि बन्धु लघु तोरा॥
मन मलीन तन सुन्दर कैसे। विषरस भरा कनक घट जैसे॥

दो० सुनि लछिमनु बिहँसे बहुरि, नयन तरेरे राम।
गुरु समीप गवने सकुचि, परिहरि बानी बाम॥

अति बिनीत मृदु शीतल बानी। बोले राम जोरि युग पानी॥
सुनहु नाथ तुम सहज सुजाना। बालक बचन करिय नहिं काना॥
बररै बालकु एक सुभाऊ। इनहिं न सन्त बिदूषहिं काऊ॥
तिन नाहीं कछु काज बिगारा। अपराधी मैं नाथ तुम्हारा॥

कृपा कोप वध बन्ध गुसाँई । मोपर करिय दास की नाईं ॥
कहियबेगि जेहिबिधि रिस जाई । मुनिनायक सोइ करिय उपाई ॥
कह मुनि राम जाय रिस कैसे । अजहुँ बन्धु तव चितव अनैसे ॥
यहिके कंठ कुठार न दीन्हा । तौ मैं कहा कोप करि कीन्हा ॥

दो० गर्भ श्रवहिं अवनिपरवनि, सुनि कुठार गति घोर ।
परशु अछत देखौं जियत, वैरी भूप किशोर ॥

बहै न हाथ दहै रिस छाती । भा कुठार कुंठित नृप घाती ॥
भयउ वाम विधि फिरेउस्वभाऊ । मोरे हृदय कृपा कसि काऊ ॥
आजु दैव दुख दुसह सहावा । सुनि सौमित्रि बिहँसि शिरनावा ॥
वाउ कृपा मूरति अनुकूला । बोलत वचन झरत जनु फूला ॥
जो पै कृपा जरै मुनि गाता । क्रोध भये तनु राखु विधाता ॥
देखु जनक हठि बालक येहू । कीन्ह चहत जड़ यमपुर गेहू ॥
वेगि करहु किन आंखिन ओटा । देखत छोट खोट नृप ढोटा ॥
बिहँसे लषन कहा मुनि पाहीं । मूंद आँखि कतहुँ कोउ नाहीं ॥

दो० परशुराम तब राम प्रति, बोले उर अति क्रोध ।
शम्भु शरासन तोरि शठ, करसि हमार प्रबोध ॥

बन्धु कहै कटु सम्मत तोरे । तू छल बिनय करसि कर जोरे ॥
करु परितोष मोर संग्रामा । नाहित छाँड़ु कहाउव रामा ॥
छल तजि करहु समर शिवद्रोही । बन्धु सहित नतु मारौं तोहीं ॥
भृगुपति बकहिं कुठार उठाये । मन मुसुकाहिं राम शिर नाये ॥
गुनहु लषन कर हम पर रोषू । कतहुँ सुधाइहुते बड़ दोषू ॥
टेढ़ जानि शंका सब काहू । बक्र चन्द्रमहिं ग्रसै न राहू ॥
राम कहेउ रिस तजिय मुनीशा । कर कुठार आगे यह शीशा ॥
जेहिरिसजाइकरियसोइस्वामी । मोहिं जानि आपन अनुगामी ॥

दो० प्रभुहिं सेवकहिं समर कस, तजहु विप्रवर रोष।
वेष विलोकि कहेसि कछु, बालकहूँ नहि दोष॥

देखि कुठार बान धनुधारी। भै लरिकहि रिस बीर विचारी॥
नाम जान पै तुमहिं न चीन्हा। वंश स्वभाव उतर तेहिं दीन्हा॥
जो तुम अवतेउ मुनि की नाँई। पदरज शिर शिशु धरत गुसाईं॥
क्षमहु चूक अनजानत केरी। चहिय विप्र उर कृपा घनेरी॥
हमहिं तुमहिं सरिबरि कस नाथा। कहहु त कहां चरण कहँ माथा॥
राम मात्र लघु नाम हमारा। परशु सहित बड़ नाम तुम्हारा॥
देव एक गुन धनुष हमारे। नव गुन परम पुनीत तुम्हारे॥
सब प्रकार हम तुमसन हारे। क्षमहु विप्र अपराध हमारे॥

दो० बार बार मुनि विप्रवर, कहा राम सन राम।
बोले भृगुपति सरुष हँसि, तुहूं बन्धु सम बाम॥

निपटहि द्विज करि जानेहु मोहीं। मैं जस विप्र सुनाऊं तोहीं॥
चाप श्रुवा सर आहुति जानू। कोप मोर अति घोर कृशानू॥
समिध सेन चतुरंग सुहाई। महामहीप भये पशु आई॥
मैं यहि परशु काटि बलि दीन्हे। समर यज्ञ जग कोटिन कीन्हे॥
मोर प्रभाव विदित नहिं तोरे। बोलसि निदरि विप्र के भोरे॥
भंजेउ चाप दाप बड़ बाढ़ा। अहमिति मनहुँ जीति जगठाढ़ा॥
राम कहा मुनि कहहु विचारी। रिस अति बड़ि लघु चूक हमारी॥
छुवतहि टूट पिनाक पुराना। मैं केहि हेतु करौं अभिमाना॥

दो० जो हम निदरहिं विप्र वदि, सत्य सुनहु भृगुनाथ।
तौ अस को जग सुभट जेहि, भय बस नावहि माथ॥

देव दनुज भूपति भट नाना। समबल अधिक होउ बलवाना॥

जो रण हमहिं प्रचारय कोऊ। लरहिं सुखेन काल किन होऊ॥
क्षत्रिय तनु धरि समर सकाना। कुल कलंक तेहि पामर जाना॥
कहौं स्वभाव न कुलहिं प्रशंसी। कालहु डरहिं न रण रघुवंसी॥
विप्र वंश की अस प्रभुताई। अभय होइ जो तुमहिं डराई॥
सुनि मृदु गूढ़ वचन रघुपति के। उघरे पटल परशुधर मति के॥
राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु चाप मिटै संदेहू॥
देत चाप आपहि चलि गयऊ। परशुराम मन विस्मय भयऊ॥

दो० जाना राम प्रभाव तब, पुलक प्रफुल्लित गात।
जोरि पानि बोले वचन, प्रेम न हृदय समात॥

जय रघुवंश वनज बन भानू। गहन दनुज कुल दहन कृशानू॥
जै सुर विप्र धेनु हितकारी। जय मद मोह कोह भ्रमहारी॥
विनय शील करुना गुनसागर। जयति वचन रचना अतिनागर॥
सेवक सुखद सुभग सब अंगा। जय शरीर छवि कोटि अनंगा॥
करौं कहा मुख एक प्रशंशा। जय महेश मन मानस हंशा॥
अनुचित बहुत कहेउँ अज्ञाता। क्षमहु क्षमामन्दिर दोउ भ्राता॥
कहि जय जय जय रघुकुलकेतू। भृगुपति गये वनहिं तप हेतू॥

अंगद और रावन का संवाद।

दो० गयो सभा दरबार रिपु, सुमिरि राम पदकंज।
सिंह ठवनि इत उत चितै, धीर वीर बलपुंज॥

तुरत निशाचर एक पठावा। समाचार रावनहिं जनावा॥
सुनत वचन बोलेउ दशशीसा। आनहु बोलि कहांकर कीसा॥
आयसु पाइ दूत बहु धाये। कपि कुंजरहि बोलि लै आये॥
अंगद दीख दशानन वैसा। सहित प्रान कज्जलगिरि जैसा॥

भुजा विटप शिर शृंग समाना । रोमावली लता जनु नाना ॥
मुख नाशिका नयन अरु काना । गिरि कन्दरा खोह अनुमाना ॥
गयउ सभा मन नेकु न मुरा । बालितनय अति बल बांकुरा ॥
उठी सभा सब कपि कह देखी । रावन उर भा क्रोध विशेखी ॥

दो० यथा मत्त गज यूथ महँ, पंचानन चलि जाय ।
राम प्रताप सभारि उर, बैठु सभा शिरु नाय ॥

कह दशकन्ध कवन तैं बन्दर । मैं रघुवीर दूत दशकन्धर ॥
मम जनकहि तोहिं रहीं मिताई । तव हित कारन आयउँ भाई ॥
उत्तम कुल पुलस्त्य कर नाती । शिव बिरंचि पूजेहु बहु भाती ॥
बर पायहु कीन्हेउ सब काजा । जीतेहु लोकपाल सुरराजा ॥
नृप अभिमान मोह वश किम्बा । हरि आनेहु सीता जगदम्बा ॥
अब शुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा । सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा ॥
दशन गहहु तृन कंठ कुठारी । परिजन सहित संग निज नारी ॥
सादर जनकसुता करि आगे । इहि विधि चलहु सकल भय त्यागे ॥

दो० प्रनतपाल रघुवंशमनि, त्राहि त्राहि अब मोंहि ।
आरत गिरा सुनतहि प्रभु, अभय करहिंगे तोहिं ॥

रे कपि पोच बोलु सँभारी । मूढ़ न जानेसि मोहिं सुरारी ॥
कहु निज नाम जनक कर भाई । केहि नाते मानिए मिताई ॥
अंगद नाम बालि कर बेटा । तासों कबहुँ भई ही भेंटा ॥
अंगद बचन सुनत सकुचाना । हां बाली बानर मैं जाना ॥
अंगद तहीं बालि कर बालक । उपजेहु वंश अनल कुल घालक ॥
गर्भ न खसेउ वृथा तुम जायहु । निज मुख तापस दूत कहायहु ॥
अब कह कुशल बालि कहँ अहई । बिहँसि वचन तब अंगद कहई ॥
दिन दश गये बालि पहँ जाई । बूझेहु कुशल सखा उर लाई ॥

राम विरोध कुशल जसि होई । सो सब तोहि सुनाइहि सोई ॥
सुन शठ भेद होइ मन ताके । श्री रघुवीर हृदय नहिं जाके ॥

दो० हम कुलघालक सत्य तुम, कुलपालक दशशीश ।
अन्धौवधिर नकहहिंअस, श्रवन नयन तव बीस ॥

शिव विरंचि सुर मुनि ससुदाई । चाहत जासु चरन सेवकाई ॥
तासु दूत है हम कुल बोरा । अइसिउ मति उर विहरु न तोरा ॥
सुनि कठोर बानी कपि केरी । कहत दशानन नयन तरेरी ॥
खलतव कठिन वचन सब सहऊँ । नीति धरम मैं जानत अहऊँ ॥
कह कपि धरमशीलता तोरी । हमहुँ सुनी कृत परतिय चोरी ॥
देखे नयन दूत रखवारी । बूड़ि न मरहु धरम व्रतधारी ॥
काननाक बिनु भगिनि निहारी । छमा कीन्ह तुम्ह धरम विचारी ॥
धरमशीलता तव जग जागी । पावा दरश हमहु बड़भागी ॥

दो० जानि जल्पसि जड़ जन्तु कपि, शठ विलोकु ममबाहु ।
लोकपाल बल विपुल शशि, ग्रसन हेतु सब राहु ॥
पुनि नभसर मम कर निकर, कमलन्हिपरकरिवाश ।
शोभित भयउ मराल इव, शम्भु सहित कैलाश ॥

तुम्हरे कटक माँझ सुनु अंगद । मोसन भिरहिं कवन योधा वद ॥
तव प्रभु नारिविरह बलहीना । अनुज तासुदुख दुखी मलीना ॥
तुम सुग्रीव कूल द्रुम दोऊ । बन्धु हमार भीरु अति सोऊ ॥
जामवन्त मन्त्री अति बूढ़ा । सोकि होइ अब समरारूढ़ा ॥
शिल्प कर्म जानहिं नल नीला । है कपि एक महाबलशीला ॥
आवा प्रथम नगरु जेहि जारा । सुनि हँसि बोलेउ बालिकुमारा ॥
सत्य वचन कह निशिचर नाहा । सांचेहु कीश कीन्ह पुरदाहा ॥

रावन नगर अलप कपि दहई। सुनि अस वचन सत्य को कहई॥
जो अति सुभट सराहेहु रावन। सो सुग्रीव केर लघु धावन॥
चले बहुत सो बीर न होई। पठवा खबरि लेन हम सोई॥

दो० अब जाना पुर दहेउ कपि, बिनु प्रभु आयसु पाइ।
फिरि नगयउ निज नाथ पहिं, तेहि भय रहा लुकाय॥
सत्य कहेसि दशकंठ सब, सुनि न मोहि कछु कोह।
कोउ न हमरे कटक अस, तो सन लरत जो सोह॥
प्रीति विरोध समान सन, करिय नीति अस आहि।
जौं मृगपति वध मेडुकहि, भल कि कहै को ताहि॥
यद्यपि लघुता राम कहुँ, तोहि वधे बड़ दोष।
तदपि कठिन दशकंठ सुनु, छत्रि जात कर रोष॥
वक्र उक्ति धनु वचन शर, हृदय दहे रिपु कीश।
प्रति उत्तर सडसिन्ह मनहुँ, काढत भट दशशीस॥
हँसि बोलेउ दशमौलि तब, कपि कर बड़ गुन एक।
जो प्रतिपालै तासु हित, करै उपाय अनेक॥

धन्य कीश जो निज प्रभु काजा। जहँ तहँ नाचै परिहरि लाजा॥
नाच कूदि कर लोग रिझाई। पति हित धरै धरम निपुनाई॥
अंगद स्वामि भगति तव जाती। प्रभु गुन कस न कहसि यहि भाँती॥
मैं गुन गाहक परम सुजाना। तव कटु रटनि करौं नहिं काना॥
कह कपि तव गुन गाहकताई। सत्य पवनसुत मोहि सुनाई॥
वन विधंसि सुत वधि पुर जारा। तदपि न तेहि कछु कृत अपकारा॥
सो विचारि तव प्रकृत सुहाई। दशकंधर मैं कीन्हि ढिठाई॥

दीख आय जो कछु कपि भाषा। तुम्हरे लाज न रोष न माषा॥
जो असि मति पितु खाए हु कीसा। कहि अस वचन हँसा दशशीसा॥
पितहि खाइ खातेउँ पुनि तोही। अबही समुझि परा कछु मोही॥
बालि विमल जश भाजन जानी। हतौं न तोहि अधम अभिमानी॥
कहु रावन रावन जग केते। मैं निज श्रवन सुने सुनु तेते॥
बलिहिं जितन एकु गयउ पताला। राखा बाँधि शिशुन हयशाला॥
खेलहिं बालक मारहि जाई। दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई॥
एक बहोरि सहसभुज देखा। धाइ धरा जिमि जन्तु विशेषा॥
कौतुक लागि भवन लै आवा। सो पुलस्ति मुनि जाय छुड़ावा॥

दो० एक कहत मोहि सकुच अति, रहा बालि की काँख।
इन्ह महुँ रावन तैं कवन, सत्य वदहिं तजि माँख॥

सुनु शठ सोइ रावन बलशीला। हरगिरि जानु जासु भुज लीला॥
जान उमापति जासु शुराई। पूजेउँ जेहि शिर सुमन चढ़ाई॥
शिर सरोज निज करन्हि उतारी। अमित बार पूजेउँ त्रिपुरारी॥
भुज विक्रम जानहिं दिगपाला। शठ अजहूँ जिन्ह के उरशाला॥
जानहिं दिग्गज उर कठिनाई। जब जब भिरे जाइ बरियाई॥
तिन्हके दशन कराल न फूटे। उर लागत मूलक इव टूटे॥
जासु चलत डोलत इमि धरनी। चढ़त मत्तगज जिमि लघु तरनी॥
सोइ रावन जग विदित प्रतापी। सुनेउ न श्रवन अलीक प्रलापी॥

दो० तेहि रावन कहँ लघु कहसि, नरकर करसि बखान।
रे कपि बर्बर खर्व खल, तब न जान अब जान॥

सुनि अंगद सकोप कह बानी। बोलु संभारि अधम अभिमानी॥
सहसबाहु भुज गहन अपारा। दहन अनल सम जासु कुठारा॥

जासु परशु सागर खरधारा। बूड़े नृप अगनित बहु बारा॥
तासु गर्व जेहि देखत भागा। सो नर क्यों दशकंठ अभागा॥
राम मनुज कस रे शठ बंगा। धन्वी काम नदी पुनि गंगा॥
पशु सुरधेनु कलपतरु रूषा। अन्न दान अरु रस पीयूषा॥
वैनतेय खग अहि सहसानन। चिन्तामनि पुनि उपल दशानन॥
सुनु मतिमंद लोक वैकुंठा। लाभ कि रघुपति भगति अकुंठा॥

दो० सेन सहित तव मान मथि, बन उजारि पुर जारि।
कस रे शठ हनुमान कपि, गये जो तवसुत मारि॥

सुनु रावन परिहरि चतुराई। भजसि न कृपासिन्धु रघुराई॥
जो खल भयसि राम कर द्रोही। ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही॥
मूढ़ बृथा जनि मारसि गाला। राम वैर होइहि अस हाला॥
तव शिर निकर कपिन्ह के आगे। परिहहिं धरनि राम शर लागे॥
ते तव शिर कन्दुक इव नाना। खेलहहिं भालु कीश चौगाना॥
जबहिं समर कोपहिं रघुनायक। छुटिहहिं अतिकराल बहु शायक॥
तबकि चलहिं शठ गाल तुम्हारा। अस विचारि भजु राम उदारा॥
सुनत वचन रावन पर जरा। जरत महानल जनु घृत परा॥

दो० कुंभकरन सम बंधु मम, सुत प्रसिद्ध शक्रारि।
मोर पराक्रम नहिं सुने, जितेउ चराचर झारि॥

शठ शाखामृग जोरि सहाई। बांधा सिंधु इहै प्रभुताई॥
नांघहि खग अनेक वारीशा। शूर न होहिं ते सुन शठ कीशा॥
मम भुज सागर बल जल पूरा। जहँ बूड़े बहु सुर नर शूरा॥
बीस पयोधि अगाध अपारा। को अस वीर जो पाइहि पारा॥
दिगपालन्ह मैं नीर भरावा। भूप सुजशु खल मोंहि सुनावा॥

जो पै समर सुभट तव नाथा। पुनि पुनि कहसि जासु गुनगाथा॥
तौ बसीठ पठवत केहि काजा। रिपुसन प्रीति करत नहिं लाजा॥
हरगिरि मथन निरखि मम बाहू। पुनि शठ कपि निजस्वामि सराहू॥
दो० शूर कवन रावन सरिस, स्वकर काटि जेहि शीश।
हुने अनल महँ बार बहु, हरषित साखि गिरीस॥
जरत बिलोकेउँ जबहिं कपाला। विधि के लिखे अङ्क निज भाला॥
नर के कर आपन बध बाँची। हँसेउ जानि विधिगिरा असाँची॥
सो मन समुझि त्रास नहिं मोरे। लिखा विरञ्चि जरठ मति भोरे॥
आन बीर बल शठ मम आगे। पुनिपुनि कहसि लाज पत त्यागे॥
कह अंगद सलज्ज जगमाहीं। रावन तोहिं समान कोउ नाहीं॥
लाजवन्त तव सहज सुभाऊ। निजमुख निजगुन कहसि न काऊ॥
शिर अरु शैल कथा चित रही। ताते बार बीस तै कही॥
सो भुज बल राखेउ उर घाली। जीतेहु सहसबाहु बलि बाली॥
सुनु मतिमन्द देहि अब पूरा। काटे शीस कि होइहिं शूरा॥
बाजीगर कहँ कहिय न बीरा। निजकर काटे सकल शरीरा॥
दो० जरहिं पतङ्ग विमोहवश, भार बहहिं खरवृन्द।
ते नहिं शूर सराहिआहि, समुझि देखु मतिमन्द॥
अब जानि बत बढ़ाव खल करही। सुनि मम वचन मान परिहरहीं॥
दशमुख मैं न बसीठी आयउ। अस विचारि रघुवीर पठायउ॥
बार बार इमि कहैं कृपाला। नहि गजारि यश बधे शृगाला॥
मन महुँ समुझि वचन प्रभु केरे। सहेउँ कठोर वचन शठ तेरे॥
नाहित करि मुख भंजन तोरा। लै जातेउँ सीतहिं बरजोरा॥
जानेउँ तव बल अधम सुरारी। सूने हरि आनहिं परनारी॥

तैं निशिचर पति गर्व बहूता । मैं रघुपति सेवक कर दूता ॥
जौं न राम अपमानहिं डरऊँ । तोहि देखत अस कौतुक करऊँ ॥

दो० तोहिं पटकि महि सेन हति, चौपट करि तव गाउँ ।
मन्दोदरी समेत शठ, जनकसुतहिं लै जाउँ ॥

जौ अस करउँ न तदपि बड़ाई । मुयेहि वधे कछु नहिं मनुसाई ॥
कौल कास वश कृपन विमूढ़ा । अति दरिद्र अजशी अतिबूढ़ा ॥
सदा रोग वश संतत क्रोधी । विष्णु विमुख श्रुति सन्त विरोधी ॥
तनु पोषक निन्दक अघखानी । जीवत शव सम चौदह प्रानी ॥
अस विचारि खल वधौं न तोहीं । अब जनि रिसि उपजावहु मोहीं ॥
सुनि सकोप कह निशिचरनाथा । अधर दशन दलि मींजत हाथा ॥
रे कपि अधम मरन अब चहसी । छोटे वदन बात बड़ कहसी ॥
कटु जलपसि जड़ कपि बल जाके । बल प्रताप बुधि तेज न ताके ॥

दो० अगुन अमान जानि तेहि, दीन्ह पिता वनवास ।
सो दुख अरु युवती विरह, पुनि निशिदिन मम त्रास ॥
जिन्हके बल कर गर्व तोहि, ऐसे मनुज अनेक ।
खाहिं निशाचर दिवस निशि, मूढ़ समुझु तजि टेक ॥

जब तेहि कीन्ह रामकर निन्दा । क्रोधवंत तब भयेउ कपिन्दा ॥
हरि हर निन्दा सुनै जो काना । होइ पाप गोघात समाना ॥
कटकटान कपि कुंजर भारी । दुहिं भुजदण्ड तमकि महिं मारी ॥
डोलत धरनि सभासद खसे । चले भाजि भय मारुत ग्रसे ॥
गिरत दशानन उठेउ सँभारी । भूतल परेउ मुकुट षटचारी ॥
कछु तेहि लै निज शिरन्हि सँवारे । कछु अंगद प्रभु पास पँवारे ॥
आवत मुकुट देखि कपि भागे । दिनहीं लूक परन विधि लागे ॥

की रावन करि कोप चलाये। कुलिश चारि आवत अति धाये॥
प्रभु हँसि कह जनि हृदय डेराहू। लूक न असनि केतु नहिं राहू॥
ए किरीट दशकन्धर केरे। आवत वालितनय के पेरे॥

दो० कूदि पवनसुत कर गहेउ, आनि धरेउ प्रभु पास।
कौतुक देखहिं भालु कपि, दिनकर सरिस प्रकास॥

उहाँ कहत दशकन्ध रिसाई। धरिं मारहु कपि भाजि न जाई॥
एहि विधि वेगि सुभट सब धावहु। खाहु भालु कपि जहं तहं पावहु॥
महि अकीश करि फेरि दुहाई। जिअत धरहु तापस दोउ भाई॥
पुनि सकोप बोलेउ जुवराजा। गाल बजावत तोहि न लाजा॥
मरु गर काटि निलज कुलघाती। बल विलोकि विहरति नहिं छाती॥
रे तियचोर कुमारग गामी। खल मल राशि मन्दमति कामी॥
सन्निपात जल्पसि दुर्वादा। भयेसि कालवश शठ मनुजादा॥
याको फल पावहुगे आगे। वानर भालु चपेटन्हि लागे॥
राम मनुज बोलत अस बानी। गिरहि न तव रसना अभिमानी॥
गिरिहहिं रसना संशय नाहीं। शिरन्हि समेत समर महि माहीं॥

सो० सो नर क्यों दशकन्ध, बालि बध्यो जेहि एक शर।
बीसहु लोचन अन्ध, धिग तव जन्म कुजाति जड़॥
तव सोणितकी प्यास, तृषित राम सायक निकर।
तजौं तोहि तेहि आस, कटु जल्पसि निशिचर अधम॥

मैं तव दशन तोरिबे लायक। आयसु मोहि न दीन्ह रघुनायक॥
अस रिसि होत दशौ मुख तोरौं। लङ्का गहि समुद्र महँ बोरौं॥
गूलरि फल समान तव लङ्का। बसहु मध्य तुम्ह जन्तु अशङ्का॥
मैं वानर फल खात न वारा। आयसु दीन्ह न राम उदारा॥

जुगुति सुनत रावण मुसुकाई । मूढ़ सिखाहि कहँ बहुत झुठाई ॥
बालि न कबहुं अस गाल मारा । मिलितपसिन्हतैं भयसिलवारा॥
साँचेहु मैं लवार भुज बीहा । जो न उपारौं तव दश जीहा ॥
राम प्रताप सुमिरि कपि कोपा । सभा माँझ प्रन करि पद रोपा ॥
जो मम चरन सकसि शठ टारी । फिरहिं राम सीता मैं हारी ॥
सुनहु सुभट सब कह दशशीसा । पद गहि धरनि पछारहु कीशा ॥
इन्द्रजीत आदिक बलवाना । हरषि उठे जहँ तहँ भट नाना ॥
झपटहिं करि बल विपुल उपाई । पद न टरै बैठहिं शिर नाई ॥
पुनि उठि झपटहिं सुर आराती । टरै न कीश चरन यहि भाँती ॥
पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी । मोह विटप नहिं सकहिं उपारी ॥

दो० कोटिन्ह मेघनाद सम, सुभट उठे हरषाइ ।
झपटहिं टरइ न कपिचरन, पुनि बैठहिं शिरनाय ॥
भूमि न छाड़ति कपिचरन, देखत रिपु मद भाग ।
कोटि विघ्न ते सन्त कर, मनजिमिनीति न त्याग॥

कपि बल देखि सकल हिय हारे । उठा आपु जुवराज प्रचारे ॥
गहत चरन कह बालि कुमारा । मम पद गहे न तोर उबारा ॥
गहसि न रामचरन शठ जाई । सुनत फिरा मन अति सकुचाई॥
भयेउ तेजहत श्री सब गई । मध्य दिवस जिमि शशि सोहई॥
सिंहासन बैठा शिर नाई । मानहुं सम्पति सकल गवाँई ॥
जगदातमा प्रानपति रामा । तासु विमुख किमि लह विश्रामा॥
उमा राम की भृकुटि विलासा । होइ विश्व पुनि पावइ नासा ॥
तृण ते कुलिश कुलिस तृन करई । तासु दूतपन कहु किमि टरई ॥
पुनि कपि कही नीति विधि नाना । मान न ताहि काल नियराना ॥
रिपु मद मथि प्रभु सुजश सुनायो । असकहि चल्यो बालिनृपजायो ॥

षष्ठ अध्याय ॥

स्त्रीशिक्षा ।

श्रीमयना जी का पार्वती जी को समझाना ।

जननी उमा बोलि तब लीन्ही । लै उछंग सुन्दर शिख दीन्ही ॥
करहु सदा शंकर पद पूजा । नारि धरमु पति देव न दूजा ॥

श्रीरामचन्द्र जी का जानकी जी को उपदेश ।

राजकुमारि सिखावन सुनहू ।आन भांति जियजनि कछुगुनहू॥
आपन मोर नीक जो चहहू । वचन हमार मानि गृह रहहू ॥
आयसु मोर सासु सेवकाई ।सब विधि भामिनि भवन भलाई॥
यहि ते अधिकु धरमु नहिं दूजा । सादर सासु ससुर पद पूजा ॥

श्रीजानकी जी का श्रीरामचन्द्र जी से विनय करना ।

मैं पुनि समुझि दीख मनमाहीं । पिय वियोग समदुख जगनाहीं॥
दो० प्राननाथ करुनायतन, सुंदर सुखद सुजान ।
तुम्हबिन रघुकुलकुमुदबिधु, सुरपुर नरक समान ॥
मातु पिता भगिनी प्रिय भाई । प्रिय परिवार सुहृद समुदाई ॥
सासु ससुर गुरु सजन सुहाई । सुत सुन्दर सुशील सुखदाई ॥
जहं लगि नाथ नेह अरु नाते ।पिअबिनु तियहि तरानिहुं ते ताते॥
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू । पति विहीन सब शोक समाजू॥
भोग रोग समु भूषण भारू । जम जातना सारिस संसारू ॥
प्राननाथ तुम्ह बिनु जगमांहीं । मोकहँ सुखद कतहुं कोउ नांहीं॥
जय बिनु देह नदी बिनु वारी । तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी ॥
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे । शरद बिमल बिधु बदनु निहारे॥

दो० खग मृग परिजन नगरु बन, बलकल विमल दुकूल।
नाथ साथ सुरसदन सम, परनशाल सुखमूल॥

बन देवी बन देव उदारा। करिहहिं सासु ससुर सम सारा॥
कुश किशलय साथरी सुहाई। प्रभु संग मंजु मनोज तुराई॥

अनसूया जी का श्रीजानकी जी को उपदेश करना।

कह ऋषि बधू सरल मृदुबानी। नारि धरम कछु व्याज बखानी॥
मातु पिता भ्राता हितकारी। मितसुखप्रद सुनु राजकुमारी॥
अमित दानि भरता वयदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही॥
धीरजु धरम मित्र अरु नारी। आपदकाल परिखियहि चारी॥
वृद्ध रोग वश जड़ धन हीना। अंध वधिर क्रोधी अति दीना॥
ऐसेहु पति कर किय अपमाना। नारि पाव यमपुर दुख नाना॥
एकै धरम एक व्रत नेमा। काय वचन मन पति पद प्रेमा॥
जग पतिव्रता चारि बिधि अहहीं। वेद पुरान संत अस कहहीं॥
उत्तम के अस बस मनमाहीं। सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं॥
मध्यम पर पति देखैं कैसे। भ्राता पिता पुत्र निज जैसे॥
धरम विचारि समुझि कुल रहहीं। ते निकिष्टतिय श्रुति अस कहहीं॥
बिनु अवसर भयते रह जोई। जानितु अधम नारि जग सोई॥
पति वंचक परपति रति करई। रौरव नरक कल्प शत परई॥
क्षनसुख लागि जनम शत कोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी॥
बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पतिव्रत धरम छांड़ि छल गहई॥
पति प्रतिकूल जनम जहं जाई। विधवा होइ पाइ तरुनाई॥

सो० सहज अपावनि नारि, पति सेवत शुभगति लहइ।
जशु गावत श्रुति चारि, अजहुं तुलसिका हरिहिं प्रिय॥

सुनु सीता तव नाम, सुमिरि नारि पतिव्रतकरहिं।
तुम्हहिं प्रानप्रिय राम, कहेउं कथा संसार हित ॥

सप्तम अध्याय ॥

अद्वितीय जगदाधार अनादि भक्तवत्सल कृपानिधान रघुकुलकमलदिवाकर श्रीसीतारामचन्द्र जी के स्वरूप का वर्णन ।

दो० नील सरोरुह नीलमनि, नील नीरधर श्याम ।
लाजहिं तनु सोभा निरखि, कोटि कोटि सत काम ॥

सरद मयंक वदन छवि सीवा । चारु कपोल चिबुक दरग्रीवा ॥
अधर अरुन रद सुन्दर नासा । विधुकरनिकर विनिन्दकहासा ॥
नवंअम्वुज अम्बक छवि नीकी । चितवनि ललित भावती जीकी ॥
भृकुटि मनोज चाप छविहारी । तिलक ललाट पटल दुतिकारी॥
कुंडल मकर मुकुट सिर भ्राजा । कुटिल केश जनु मधुप समाजा॥
उर श्रीवत्स रुचिर वनमाला । पदिक हार भूषण मनिजाला ॥
केहरि कंधर चारु जनेऊ । बाहु विभूषन सुन्दर तेऊ ॥
करिकर सरिस सुभग भुजदंडा । कटि निखंग कर शर कोदंडा ॥

दो० तड़ित विनिन्दक पीतपट, उदर रेख वर तीनि ।
नाभि मनोहर लेति जनु, यमुन भँवर छवि छीनि ॥

पद राजीव बरानि नहिं जाहीं । मुनि मन मधुप बसहिं जेहि माहीं॥
बाम भाग सोभित अनुकूला । आदि शक्ति छवि निधि जगमूला ॥
जासु अंस उपजहिं गुन खानी । अगनित उमा रमा ब्रह्मानी ॥

भृकुटि विलास जासु जग होई । राम बाम दिशि सीता सोई ॥
काम कोटि छबि श्याम शरीरा । नील कंज वारिद गंभीरा ॥
अरुन चरन पंकज नख जोती । कमलदलन्हि बैठे जनु मोती ॥
रेख कुलिश ध्वज अंकुश सोहै । नूपुर धुनि सुनि मुनि मन मोहै ॥
कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा । नाभि गँभीर जान जेहि देखा ॥
भुज बिशाल भूषण जुत भूरी । हिय हरि नख शोभा अति रूरी ॥
उर मनिमाल पदिक की शोभा । विप्र चरन देखत मनु लोभा ॥
कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई । आनन अमित मदन छवि छाई ॥
दुइ दुइ दशन अधर अरुनारे । नासा तिलक को बरनै पारे ॥
सुन्दर श्रवन सुचारु कपोला । अतिप्रिय मधुर सुतोतरि बोला ॥
नील कमल दोउ नयन विशाला । विकटभृकुटि लटकत वर भाला ॥
चिक्कन कच कुंचित गभुआरे । बहु प्रकार रचि मातु सवांरे ॥
पीत झिंगुलिआ तनु पहिराई । जानु पानि बिचरनि मोहि भाई ॥
मरकत मृदुल कलेवर श्यामा । अंग अंग प्रति छवि बहु कामा ॥
नवराजीव अरुन मृदु चरना । पदजरुचिरनखशशिद्युतिहरना ॥
ललित अंग कुलिशादिक चारी । नूपुर चारु मधुर रवकारी ॥
चारु पुरट मनि रचित बनाई । कटि किंकिनि कल मुखर सुहाई ॥

दो० रेखा त्रय सुन्दर उदर, नाभि रुचिर गंभीर ।
उर आयत भ्राजत विविध, बाल विभूषण चीर ॥

अरुन पानि नख करज मनोहर । बाहु विशाल विभूषन सोहर ॥
कंध बाल केहरि दरग्रीवा । चारु चिबुक आनन छवि सीवा ॥
कलबल वचन अधर अरुनारे । दुइ दुइ दशन विशद वरवारे ॥
ललित कपोल मनोहर नासा । सकलसुखद शशिकर समहासा ॥
नील कंज लोचन भव मोचन । भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ॥

विकट भ्रुकुटि सम श्रवन सुहाए । कुंचित कच मेचक छवि छाए ॥
पीत झीन झँगुलि तनु सोही । किलकनि चितवनि भावत मोही ॥
रूप राशि नृप अजिर विहारी । नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी ॥
पीत वसन परिकर कटि भाथा । चारु चाप शर सोहत हाथा ॥
तनु अनुहरत सुचंदन खोरी । श्यामल गौर मनोहर जोरी ॥
केहरि कन्धर बाहु विशाला । उर अति रुचिर नाग मनिमाला ॥
सुभग सोन सरसीरुह लोचन । वदन मयंक ताप त्रय मोचन ॥
कानन्हि कनकफूल छवि देहीं । चितवत चितहिं चोरि जनु लेहीं ॥
चितवनि चारु भ्रुकुटि वर बांकी । तिलक रेख शोभा जनु चांकी ॥

दो० रुचिर चौतनी सुभग शिर, मेचक कुंचित केश ।
नख शिख सुन्दर बन्धु दोउ, शोभा सकल सुदेश ॥

भुज प्रलम्ब कंजारुन लोचन । श्यामल गात प्रणव भय मोचन ॥
सिंह कन्ध आयुत उर सोहा । आनन अमित मदन छवि मोहा ॥
काकपक्ष सिर सोहत नीके । गुच्छे बिच बिच कुसुम कली के ॥
भाल तिलकु श्रम विन्दु सुहाए । श्रवन सुभग भूषन छवि छाए ॥
बिकट भृकुटि कच घूँघरवारे । नव सरोज लोचन रतनारे ॥
चारु चिबुक नासिका कपोला । हास विलास लेत मन मोला ॥
मुख छवि कहि न जात मोहिं पाहीं । जो विलोकि बहु काम लजाहीं ॥
उर मनिमाल कम्बु कलग्रीवा । काम कलभ कर भुज बलसींवा ॥

दो० केहरि कटि पट पीतधर, सुखमा शीलनिधान ।
देखि भानुकुल भूषनहिं, बिसरा सखिन अपान ॥

केकि कंठ दुति श्यामल अंगा । तड़ित विनिन्दक वसन सुरंगा ॥
ब्याह विभूषन विविध बनाए । मंगलमय सब भांति सुहाए ॥

शरदविमल विधु वदन सुहावन । नयन नवल राजीव लजावन ॥
श्याम शरीर सुभाय सुहावन । सोभा कोटि मनोज लजावन ॥
जावक युत पद कमल सुहाए । मुनि मन मधुप रहत जिन्ह छाए॥
पीत पुनीत मनोहर धोती । हरति बालरवि दामिनि जोती ॥
कल किंकिनि कटिसूत्र मनोहर । बाहु विशाल विभूषन सुंदर ॥
पीत जनेउ महाछवि देई । कर मुद्रिका चोरि चित लेई ॥
सोहत ब्याह साज सब साजे । उर आयत अतिभूषन राजे ॥
पीत उपरना कांखा सोती । दुंहु आचरन्हि लगे मनि मोती॥
नयन कमल कल कुंडल काना । वदन सकल सौन्दर्य निधाना ॥
सुन्दर भ्रुकुटि मनोहर नासा । भाल तिलक रुचिरता निवासा ॥
सोहत मौर मनोहर मांथे । मंगलमय मुकता मनि गांथे ॥

छन्द ।

गांथे महामनि मौर मंजुल अंग सब चित चोरहीं ।
पुरनारि सुर सुंदरी वरहिं विलोकि सब तृन तोरहीं ॥

स्वयं श्रीमुख से सर्कार भुवनेश्वर साक्षात् जगदीश्वर रामचन्द्र जीने कहा है ।

"जासु विलोकिअलौकिकशोभा । सहज पुनीत मोर मन क्षोभा॥"
कंकनु किंकिनि नूपुर धुनि सुनि । कहतलषन सन रामहृदय गुनि॥
मानहुं मदन दुंदुभी दीन्हीं । मनसा विश्व विजय कहँ कीन्हीं॥
अस कहि फिरि चितये तेहि ओरा । सिय मुखशशि भए नयन चकोरा॥
भए विलोचन चारु अचंचल । मनहुं सकुचि निमि तजे दृगंचल॥
देखि सीय सोभा सुख पावा । हृदय सराहत वचनु न आवा ॥
जनु विरंचि सब निज निपुनाई । विरचि विश्व कहं प्रगट देखाई ॥
सुन्दरता कहं सुन्दर करई । छवि गृह दीप शिषा जनु बरई ॥

सब उपमा कवि रहे जुठारीं। केहि पटतरौं विदेह कुमारीं॥

दो० सिय शोभा हिय वरनि प्रभु, आपनि दशा विचारि।
बोले शुचि मन अनुज सन, वचन समय अनुहारि॥

तात जनकतनया यह सोई। धनुष यज्ञ जेहि कारन होई॥
पूजन गौरि सखी लै आई। करत प्रकाश फिरति फुलवाई॥
जासु विलोकि अलौकिक सोभा। सहज पुनीत मोर मन छोभा॥
प्राची दिशि शशि उएउ सुहावा। सिय मुख सरिस देखि सुख पावा॥
वहुरि विचार कीन्ह मन माहीं। सीय वदन सम हिमकर नाहीं॥

दो० जनम सिन्धु पुनि बंधु विष, दिन मलीन सकलंकु।
सिय मुख समता पाव किमि, चन्द्र बापुरो रंकु॥

घटै बढ़ै विरहिन दुखदाई। ग्रसै राहु निज संधिहि पाई॥
कोक शोक प्रद पंकज द्रोही। अवगुन वहुत चन्द्रमा तोही॥
वैदेही मुख पटतर दीन्हे। होत दोष बड़ अनुचित कीन्हे॥
सिय शोभा नहिं जाय वखानी। जगदम्बिका रूप गुन खानी॥
उपमा सकल मोहिं लघु लागी। प्राकृत नारि अंग अनुरागी॥
सीय वरनि तेहि उपमा देई। को कवि कहाइ अयसु को लेई॥
जो पटतारिय तीय सम सीया। जग अस युवति कहां कमनीया॥
गिरा मुखर तनु अरध भवानी। रति अति दुखित अतनु पति जानी॥
विष वारुनी बन्धु प्रिय जेही। कहिय रमा सम किमि वैदेही॥
जो छवि सुधा पयोनिधि होई। परम रूप मय कच्छपु सोई॥
शोभा रजु मन्दर सिंगारू। मथै पानि पंकज निज मारू॥

दो० यहि विधि उपजै लक्षि जब, सुन्दरता सुखमूल।
तदपि सकोच समेत कवि, कहहिं सीय सम तूल॥

सोह नवल तनु सुन्दर सारी। जगतजननि अतुलित छविभारी॥
भूषन सकल सुदेश सुहाए। अंग अंग रुचि सखिन्ह बनाए॥
रंग भूमि जब सिय पगु धारी। देखि रूप मोहे नर नारी॥
मैं पुनि पुत्र वधू प्रिय पाई। रूप राशि गुन शील सुहाई॥
सिंहासन पर त्रिभुवन साईं। देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाईं॥

छन्द।

नभ दुन्दुभी बाजहिं विपुल गंधर्व किन्नर गावहीं।
नाचहिं अपछरा वृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं॥
भरतादि अनुज विभीषनांगद हनुमतादि समेत जे।
गहिं छत्र चामर ब्यजन धनु असि चर्म शक्ति विराजते॥
श्री सहित दिनकर वंश भूषन काम बहु छवि शोभई।
नव अम्बुधर वरगात अंबर पीत मुनि मन मोहई॥
मुकुटांगदादि विचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे।
अंभोज नयन विशाल उर भुज धन्य नर निरखंत जे॥

दो० वह शोभा सुसमाज सुख, कहत न बनै खगेश।
बरनै शारद शेष श्रुति, सो रस जान महेश॥

सहज मनोहर मूरति दोऊ। कोटि काम उपमा लघु सोऊ॥
शरद चन्द निन्दक मुख नीके। नीरज नयन भावते जीके॥
चितवनि चारु मार मनु हरनी। भावति हृदय जाति नहिं बरनी॥
कल कपोल श्रुति कुंडल लोला। चिबुक अधर सुन्दर मृदु बोला॥
कुमुद बंधु कर निंदक हासा। भ्रुकुटी विकट मनोहर नासा॥
भाल विशाल तिलक झलकाहीं। कच विलोकि अलि अवलि लजाहीं॥
पीत चौतनी शिरन्हु सुहाई। कुसुम कली बिच बीच बनाई॥
रेखा रुचिर कम्बु कल ग्रीवा। जनु त्रिभुवन उपमा की सींवा॥

दो० कुंजर मनि कंठा कलित, उर तुलसी का माल।
वृषभ कंध केहरि ठवनि, बलनिधि बाहुँ विशाल॥
कटि तूणीर पीत पट बांधे। कर शर धनुष बाम कर कांधे॥
पीत यज्ञ उपवीत सुहाए। नख सिख मंजु महाछवि छाए॥
श्याम तामरस दाम शरीरं। जटा मुकुट परिधन मुनि चीरं॥
पाणि चाप शर कटि तूणीरं। नौमि निरन्तर श्रीरघुवीरं॥
अरुण नयन राजीव सुवेषं। सीता नयन चकोर निशेषं॥
मर्कत कनक छविहि जनु निंदक। सो जन धन्य उमा जे वन्दक॥
मत्त गयंद शुंड भुज दंडा। धनुष बाण असि धरे प्रचंडा॥
उर विशाल अति उन्नत कंधर। कंबु कंठ रेखा वर त्रय धर॥
मुखछवि को उपमा कवि जोहहिं। शशि सरोज सम कहें न सोहहिं॥
दशन पांति की कांति कहै को। ललकत मन पटतरहिं लहै को॥
देखत अधरन की अरुणाई। विंबाफल वंधूक लजाई॥
शुक तुंडहि नासिका लजावहिं। ढके सुकवि नहिं पटतर पावहिं॥
भ्रुकुटी विकट कपोल सुहाए। शीस जटा के मुकुट बनाए॥
भालविशाल तिलक जुत सोहहीं। ध्यानसमय लखि मुनिमन मोहहीं॥
वल्कल वसन तूण कटि बांधे। कर शर सुभग शरासन कांधे॥
वीरासन आसन मृगछाला। नव पल्लव प्रसून की माला॥
चरण सरोज बरणि नहिं जाई। जहंमुनि मनमधुकर सदा लुभाई॥
सती दीख कौतुक मग जाता। आगे राम सहित श्री भ्राता॥
फिरि चितवा पाछे प्रभु देषा। सहित बन्धु सिय सुन्दर वेषा॥
जहं चितवहिं तहं प्रभु आसीना। सेवहिं सिद्ध मुनीश प्रवीना॥
देखे शिव विधि विष्णु अनेका। अमित प्रभाव एक ते एका॥
बन्दत चरन करत प्रभु सेवा। विविध वेष देखे सब देवा॥

दो० सती विधात्री इन्दिरा, देखी अमित अनूप।
जेहि जेहि वेष अजादि सुर, तेहि तेहि तनु अनुरूप॥
देखे जहं तहं रघुपति जेते। शक्तिन सहित सकल सुर तेते॥
जीव चराचर जे संसारा। देखे सकल अनेक प्रकारा॥
पूजहिं प्रभुहिं देव वहु वेषा। राम रूप दूसर नहिं देषा॥
अवलोके रघुपति बहुतेरे। सीता सहित न वेष घनेरे॥
सोइ रघुवर सोइ लछिमनु सीता। देखि सती अति भई सभीता॥
दो० दिखरावा मातहिं निज, अद्भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति राजहिं, कोटि कोटि ब्रह्मंड॥
अगनित रवि शशि शिव चतुरानन। बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन॥
काल करम गुन ज्ञान स्वभाऊ। सो देखा जो सुना न काऊ॥
देखी माया सब विधि गाढ़ी। अति सभीत जोरे कर ठाढ़ी॥
देखा जीव नचावै जाही। देखी भगति जो छोरे ताही॥
पद पाताल शीस अज धामा। अपर लोक अंगन्ह विश्रामा॥
भ्रुकुटि विलास भयंकर काला। नयन दिवाकर कच घनमाला॥
जासु घ्राण अश्विनीकुमारा। निशि अरु दिवस निमेष अपारा॥
श्रवण दिशा दश वेद बखानी। मारुत श्वास निगम निज बानी॥
अधर लोभ यम दशन कराला। माया हास बाहु दिगपाला॥
आनन अनल अम्बुपति जीहा। उत्पति पालन प्रलय समीहा॥
रोमावली अष्टदश भारा। अस्थि शैल सरिता नस जारा॥
उदर उदधि अघ गोयातना। जगमय प्रभु की बहुत कल्पना॥

मुख्यमानसहृदय।

प्रथमहिं अति अनुराग भवानी। रामचरित सब कहेसि बखानी॥
पुनि नारद कर मोह अपारा। कहेसि बहुरि रावन अवतारा॥

प्रभु अवतार कथा पुनि गाई। तब शिशु चरित कहेसि मनलाई॥
दो० बालचरित कहि विविध विधि, मनमहं परम उछाहु।
ऋषि आगवन कहेसि पुनि, श्रीरघुवीर बिवाहु॥
बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा। पुनि नृप वचन राज रसभंगा॥
पुरवासिन कर विरह विषादा। कहेसि राम लछिमनु सम्वादा॥
विपिन गवन केवट अनुरागा। सुरसरि उतरि निवास प्रयागा॥
वाल्मीकी प्रभु मिलन बखाना। चित्रकूट जिमि बस भगवाना॥
सचिवागवन नगर नृप मरना। भरतागवन प्रेम बहु बरना॥
करि नृप क्रिया संग पुरवासी। भरत गये जहं प्रभु सुखरासी॥
पुनि रघुपति बहुविधि समुझाये। लै पादुका अवधपुर आये॥
भरत रहनि सुरपतिसुत करनी। प्रभु अरु अत्रि भेट पुनि बरनी॥
दो० कहि विराध वध जाहि विधि, देह तजी सरभंग।
बरनि सुतीक्षन प्रीति पुनि, प्रभु अगस्तिसतसंग॥
कहि दण्डक वन पावनताई। गीध मइत्री पुनि तेइँ गाई॥
पुनि प्रभु पंचवटी कृत वासा। भंजेउ सकल मुनिनकर त्रासा॥
पुनि लक्ष्मण उपदेश अनूपा। सूपनखा जिमि कीन्ह कुरूपा॥
खरदूषन वध बहुरि बखाना। जिमि सब मर्म दशानन जाना॥
दशकन्धर मारीच बतकही। जेहि विधि भई सकल तेइँ कही॥
पुनि माया सीता कर हरना। श्रीरघुवीर विरह कछु बरना॥
पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्ही। बधि कबंध शवरिहिं गति दीन्ही॥
बहुरि विरह बर्नत रघुवीरा। जेहि विधि गयेउ सरोवर तीरा॥
दो० प्रभु नारद संवाद कहि, मारुत मिलन प्रसंग।
पुनि सुग्रीव मिताई, बालि प्रान कर भंग॥

कपिहि तिलक करि प्रभुजकृत, शैल प्रवर्षन बास ।
बरने वर्षा शरदऋतु, रामरोष कपि त्रास ॥

जेहि विधि कपिपति कीश पठाये । सीता खोज सकल दिशि धाये ॥
विवर प्रवेश कीन्ह जेहि भांती । कपिन बहोरि मिला संपाती ॥
सुनि सब कथा समीरकुमारा । लांघत भयउ पयोधि अपारा ॥
लंका कपि प्रवेश जिमि कीन्हा । पुनि सीतहि धीरज जिमि दीन्हा ॥
वन उजारि रावनहिं प्रबोधी । पुर दहि नाँघेउ बहुरि पयोधी ॥
आये कपि सब जहं रघुराई । बैदेही की कुशल सुनाई ॥
सेन समेत यथा रघुवीरा । उतरे जाइ वारिनिधि तीरा ॥
मिला विभीषनु जेहिविधि आई । सागर निग्रह कथा सुनाई ।

दो० सेतु बांधि कपि सेन जिमि, उतरे सागर पार ।
गयउ बसीठी वीर वर, ज्यहिविधिबालिकुमार ।
निशिचर कीश लराइ पुनि, बरने विविध प्रकार ।
कुम्भकर्ण घननाद कर, बल पौरुष संहार ।

निशिचरनिकरमरन विधिनाना । रघुपति रावन समर बखाना ॥
रावण वध मन्दोदरि शोका । राज्य विभीषन देव अशोका ।
सीता रघुपति मिलन बहोरी । सुरन कीन्ह अस्तुति कर जोरी ।
पुनि पुष्पक चढ़ि सीय समेता । अवध चले प्रभु कृपानिकेता ।
जेहिविधि राम नगर निज आये । वायस विशद चरित सब गाये ॥
कहेसि बहोरि राम अभिषेका । पुर बर्नन नृप नीति अनेका ।
कथा समस्त भुशुंड बखानी । जो मैं तुम सन कहा भवानी

इति शुभम् ॥